।।८१७।।

।। रामकथा ।।

मोरारिबापू

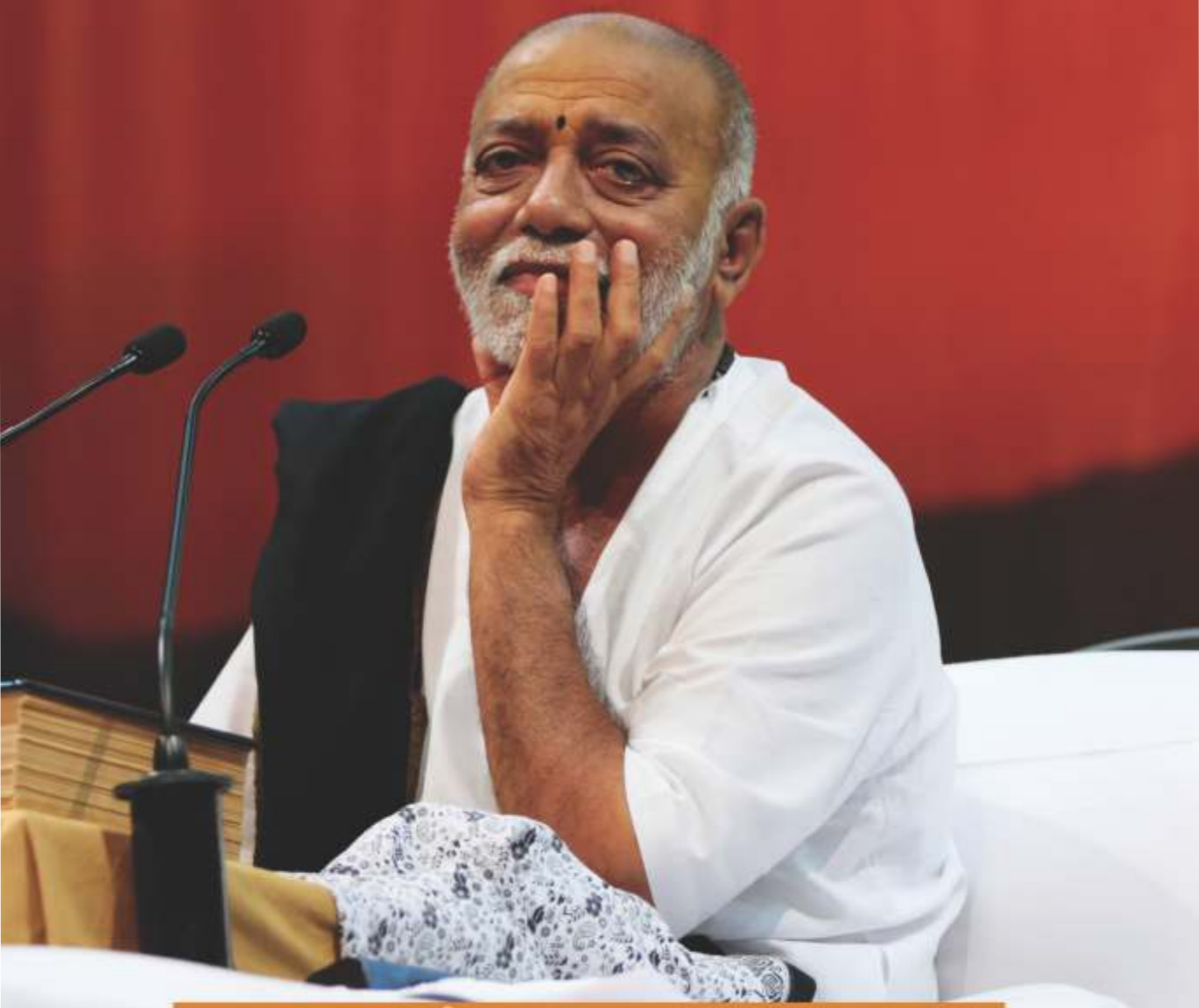

मानस–कागऋषि

मजादर–कागधाम (गुजरात)

यह प्रभु चरित पवित्र सुहावा। कहहु कृपाल काग कहँ पावा।।
कहहु कवन बिधि भा संबादा। दोउ हरिभगत काग उरगादा।।

।। रामकथा ।।

मानस–कागऋषि

मोरारिबापू

मजादर–कागधाम (गुजरात)

दिनांक : २२-०२-२०१५ से ०१-०३-२०१५

कथा-क्रमांक : ७७२

प्रकाशन :

जनवरी, २०१६

प्रकाशक

श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,

तलगाजरडा (गुजरात)

www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट

© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक

नीतिन वडगामा

nitin.vadgama@yahoo.com

हिन्दी अनुवाद

प्रो. कमल महेता

राम–कथा पुस्तक प्राप्ति

सम्पर्क–सूत्र :

ramkatha9@yahoo.com

ग्राफिक्स

स्वर ॲनिम्स

प्रेम–पियाला

मजादर–कागधाम (गुजरात) में कागबापू की पावनभूमि पर दिनांक २२–२–२०१५ से १–३–२०१५ दरम्यान मोरारिबापू ने 'मानस–कागऋषि' विषय को केन्द्र में रखकर रामकथा का गायन किया।

देवर्षि, महर्षि, ब्रह्मर्षि, राजर्षि और स्वनिर्मित प्रेमर्षि जैसे पांच ऋषिओं का निर्देश कर बापू ने कथा का एक नया विषय 'कागऋषि' पसंद किया। कैलास शिखर पर होती कथा में रामराज्य के अंत में पार्वती ने शिवजी के सामने जिज्ञासा रखी कि परमात्मा का यह पवित्र चरित्र काग को कहां से मिला? कागभुशुंडि और गरुड दोनों हरिभगत है। उनके बीच कैसा संवाद हुआ? उसको कथा–केन्द्र बनाकर बापू ने कहा कि मुझे शास्त्र की परंपरा से इस मजादर के रहावन तक जाना है। 'मानस' के कागऋषि जैसे ही मजादर के ऋषि कागबापू को जोड़कर बापू ने कहा कि नीलगिरि के कागभुशुंडि से लेकर मजादर कागबापू तक संवाद–सेतु बनाना है।

'रज से सूरज तक का पंथ काटे वह ऋषि कवि है।' ऐसे सूत्रात्मक निर्देश के साथ मोरारिबापू ने कागबापू को दहलीज से अंबर तक का कवि और 'कंकर से लेकर कैलास तक' का कवि मानकर कागबापू की महिमा बताकर यों भी कहा कि कागबापू की रेन्ज मजादर से मानसरोवर तक की है। इसी तरह कागभुशुंडि में रही रामनिष्ठा, कृष्णनिष्ठा, शिवनिष्ठा, शक्तिनिष्ठा, और गुरुनिष्ठा जैसी पांच निष्ठा का निर्देश कर बापू ने कहा कि ज्यों कागभुशुंडि पांच निष्ठा का पिंड है, उसी तरह भगतबापू भी पांच निष्ठा का पिंड है। कथा अंतर्गत बापू ने यथावकाश स्वच्छता और संवादिता का संदेश भी प्रवाहित किया।

'तारा सुंदर वाजिंत्रो तुं जगतने दई देजे,
अने लइ लेजे तारो तंबूर एकलो!'

जैसी कागबापू की पंक्ति के संदर्भ साथ, बापू ने श्रोता–समुदाय से ऐसी अपील भी की कि इस पंथक का कवि ऐसा कहता हो तो छोटे–छोटे खेत की सीमाओं का झगडा छोड़ दे। छोटे–छोटे केस कोर्ट में हो तो वापिस खींच ले।

सुविदित है कि मोरारिबापू को कागबापू प्रति बेहद आदर है। फलतः बापू की रामकथा में कागबापू की कविता के संदर्भ निरंतर आते रहते हैं। यह कथा तो भगतबापू–दुला भाया काग की चेतना के स्मरण में ही आयोजित हुई, अतः उसमें सहजता से ही कागबापू के काव्य और दोहे पूरे मन से बापू ने याद किए। ऐसा कहे कि 'मानस–कागऋषि' रामकथा में 'तुलसीवाणी' और 'कागवाणी' का मणिकांचन योग हुआ।

– नीतिन वडगामा

मानस–कागऋषि

:: १ ::

ऋषि मंत्रदृष्टा होता है, भगतबापू सूत्रदृष्टा है

यह प्रभु चरित पवित्र सुहावा। कहहु कृपाल काग कहँ पावा।।
कहहु कवन बिधि भा संबादा। दोउ हरिभगत काग उरगादा।।

परमात्मा की असीम कृपा से, मजादर कागधाम पूज्य कागबापू की इस पावन भूमि में रामकथा का आरंभ हो रहा है तब सर्व प्रथम मैं अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। इस कथा हेतु आशीर्वाद लेकर कागबापू की इस भूमि पर तलगाजरडी प्रेमयज्ञ आयोजित हो इसके लिए जिनके अंतरीक्ष में से आशीर्वाद आए होंगे ऐसी परम पूज्य आई माँ सोनलमाँ का स्मरण करता हूं। उनके स्थान में से आई हुई पूज्य अनुमाँ को प्रणाम। आप अस्वस्थ तबियत होने पर भी आई हैं। इस समग्र आयोजन में जिन्होंने हृदय से भाग लिया है ऐसी पू. आई माँ, कंकु केसरमाँ, आई माँ मीनलमाँ और जो आईमाँ आ नहीं सकी है या आगामी दिनों में आशिष देने आयेगी उन सब को आज प्रथम दिन पर स्मरण कर, भगवती अम्बा से लेकर सब को प्रणाम करता हूं। जय माताजी।

आज के इस पावन प्रसंग पर चारण समाज के विद्वान सारस्वत सर्जक सभी यहां उपस्थित है। सब को मेरे जय माताजी, नमन; और जिन्होंने समग्र चारण समाज की ओर से हृदयोद्गार व्यक्त किए, हमारे परम आदरणीय स्नेही वसंतभाई; पूरे चारण समाज ने एक होकर मण्डप खड़ा किया है उन सब का मेरी व्यासपीठ पर से स्वागत करता हूं। प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। खास कर भगतबापू की घनिष्ठ चेतना को प्रणाम करता हूं। दो वर्ष पहले पीपावाव की कथा हुई तभी से बीजारोपण हुआ था कि योग हो, माताजी आशीर्वाद दे और पूरा चारण समाज एक साथ अपना भाव अर्पण करे इस सत्कर्म को आशीर्वाद दे। कागबापू की इस भूमि पर हम प्रति वर्ष आते ही हैं परन्तु नौ दिन का प्रेमयज्ञ हो ऐसा मन में था और भावनगर के कार्यक्रम में सभी बुज़ुर्गों से कहा, सभी एक होकर पुकार करे तो पूजनीय कागबापू की भूमि

मजादर में हम उनकी स्मृति में गायन करें। प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। चिमनभाई वाघेला ने तुर्त ही हाथ उठाकर कहा कि 'बापू, ज्यों पीपावाव में निमित्त बनाया था उसी तरह इस में भी बनाइयेगा।' टुकड़ों को जोडनेवाला दर्जी और उनके समस्त परिवार का उत्साह था कि इस कथा की संपूर्ण वित्तजा सेवा मुझे दीजिए। इन्होंने वित्तजा के साथ तनुजा और मानसी सेवा भी की है।

भगतबापू की स्मृति में यह कथा आयोजित है तब इस समाज में जितने सर्जक हुए हैं, जो वर्तमान के हैं और भविष्य में जो होंगे उन सब को भगतबापू के साथ मैं इस समाज के सभी सर्जकों की वंदना करता हूं। कितने नाम लूं? केन्द्र में भगतबापू है। उनकी स्मृति को पूरी कथा समर्पित है। इसमें काग-परिवार तो है ही। बाबुभाई बिलकुल मौन है। मजादर गांव के सरपंच से लेकर सभी छोटे-बड़े भाई-बहन और गुजरात, कच्छ, हिन्दुस्तान और विश्व के फलक पर रहते समस्त चारण समाज की यह कथा है। बाप, आदि सर्जक और भगतबापू को केन्द्र में रखकर अभी जो आयेंगे, आप की सरस्वती यदि इसी तरह बहेगी तो अभी भी औरों का अवतरण होगा। उन सब के लिए 'मानस' की एक चौपाई है, मेरे सद्गुरु भगवान ने सिखाया है कि सब को सीताराम समझकर चरणस्पर्श करना। क्या मैं काले कंबल या यों फूलहार या सुवर्ण चेन से वंदन करूं? मेरे पास तो तुलसी की चौपाई की संपदा है। बाप! उस में से एक सर्वग्राही चौपाई बेमिसाल है, जो अमूल्य है। ऐसी चौपाईयां भगतबापू को प्रिय थी। इनके मूल में ये 'रामायण' है। तो जो हो गए, जो है और जो होंगे उन सब का मुझे एक साथ भंडारा करना है। केन्द्र में भगतबापू रहेंगे। परंतु आदि से लेकर आज तक के सभी सर्जकों को चौपाई द्वारा वंदन करता हूं-

भए जे अहहिं जे होइहहिं आगें ।
प्रनवउँ सबहिं कपट सब त्यागे ।।

तुलसीजी की इस पावनी परंपरा में समस्त सारस्वत अवतरण है। सब का चरण स्पर्श करता हूं। बाप, यह आप सब की कथा है। आप सब के द्वारा हो रही है। आप सब के लिए है। ऐसी यह कथा आप सब की शुभ कामना से शुरू हो रही है तब भगतबापू की स्मृति में हम सब गायन करें।

मैं सोच रहा था कौन-सा विषय लूं? सभी का अंदाज था कि यह विषय आएगा। मैंने 'उत्तरकांड' में से दो पंक्तियां ली है जिसके केन्द्र में जगदंबा है। कोई आदि आई माँ पड़ी है। कैलास के शिखर पर कथा हो रही थी। पार्वती ने रामराज्य पूरा होने के बाद जिज्ञासा की है, हे प्रभु, मुझे एक प्रश्न हो रहा है-

यह प्रभु चरित पवित्र सुहावा।
कहहु कृपाल काग कहँ पावा।।

'हे कृपालु, मुझे बताइए कि इस पवित्र और सुंदर परमात्मा का चरित्र काग को कहां से मिला? उनमें कहां से उतरा? यह मेरी जिज्ञासा है। और

कहहु कवन बिधि भा संबादा।
दोउ हरिभगत काग उरगादा।।

'आप ने कहा कि गरुडजी सुनने गए थे। अपने संदेह सह गए थे जहां नीलगिरि पर्वत पर भुशुंडि महाराज बिराजते थे। प्रभु, मुझे पूछना है कि 'कहहु कवन बिधि भा संबादा।' मुझे बताइए कि किस तरह संवाद हुआ? क्योंकि दोनों कैसे हैं? 'दोउ हरिभगत काग उरगादा।' काग और गरुड दोनों हरिभगत हैं। दोनों के बीच संवाद कैसे हुआ? किस तरह की बातें हुई? रामकथा का परिणाम आप मुझे प्रसाद के रूप में देना चाहते हैं तो मुझे इस महान हरिभक्त के बीच जो चर्चा हुई यह बताइए। काग को यह पवित्र चरित्र कहां से मिला?' पार्वती बीच में पूछती है कि गरुड ने महात्माओं के वृंद को छोड़कर एक काग को क्यों कथा पूछी है? यह मुझे विस्तार से बताइए।

तुलसीजी 'काग' शब्द प्रयोजित करते हैं। इसलिए हम इस कथा को 'मानस-कागऋषि' नाम देंगे। 'मानस' का कागऋषि है, उसी तरह मजादर का एक दूसरा ऋषि हुआ है। पांव के तलुअे से लेकर सिर के तालु तक बातें करते इस एक लोककवि को समांतररूप से जोड़ना है। यह दाढ़ीवाला ऋषि ही तो था न? हम समकालीन समाज में पहचान नहीं पाते। 'भेगा बेसनारा भरमाणा, मोटाना तळिया ना मळे।' सामने बैठे हो न, फिर भी हम चुक जाते हैं, साहब! और कोई मोती पिरो लेता है। कागबापू की वेशभूषा देखकर तो कोई वैष्णव साधु बैठा हो ऐसा लगे। इतनी गुरुपरंपरा का आदर अर्पित करता हूं।

'मानस' संवाद का शास्त्र है और मैं भी संवाद का आदमी हूं। विवाद, अपवाद या दुर्वाद में गये बिना बातें करनी है। पार्वती का प्रश्न है, काग को यह चरित्र कहां से मिला? गरुड वहां क्यों सुनने जाते हैं? इस प्रश्न में से कागभुशुंडि की कहानी शुरू होती है। नीलगिरि के कागभुशुंडि से लेकर मजादर कागबापू तक हमें सेतु बांधना है। आप सब को व्यासपीठ से आने का निमंत्रण है। ग्राम्य जनता है। अत: प्रसंग भी कहता आऊंगा। मूलत: यह तात्त्विक-सात्त्विक चर्चा रहेगी। भगतबापू के साहित्य में से जितना याद आता जायेगा, यह स्रोत भी 'मानस' के साथ जोड़ता जाऊंगा। संवाद के रूप में हम बातें करेंगे। मैं अपनी प्रसन्नता व्यक्त करूंगा।

कथा का मूल शीर्षक 'मानस-कागर्षि', 'काग-ऋषि' रहेगा। ऋषि के सात लक्षण है। मुझे शास्त्र की परंपरा से मजादर तक आना है। फिर आप ही तय करना कि ऋषि के लक्षण तब थे वे अब मिलते हैं? यदि दृष्टि होगी तो बापू में दिखाई देंगे। ये नौ दिन काग की ही बातें करेंगे। काग के सात लक्षण ऋषि के लक्षण है। यह छके हुए प्याले का कवि! मैंने तीन बार रूबरू उन्हें सुने हैं। दो बार महुवा के जे. पी. पारेख हाईस्कूल के प्रांगण में। शरद पूनम के कार्यक्रम में वे रहते ही थे। साथ में मेरूभा, रतिकुमार व्यास रहते थे। एक बार योगीजी महाराज पधारे थे तब धोबीवाडी में बापू पधारे थे। तब मैंने श्रवण लाभ लिया था। एक बार मैं महुआ में छोटी पहाड़ी पर कथा करता था तब भगतबापू घोडागाडी में बैठकर आए थे। तब उन्होंने कथा सुनकर प्रसन्नता व्यक्त की थी। यह हमारा कथीवदर वहां हमारे साधु का मंडप था वहां भगतबापू आए थे। आरामकुर्सी या छोटे चबूतरे पर बैठकर अच्छी बातें सुनाई थी। महुवा से भावनगर बी. एम. टी. छोटी ट्रेन में आते थे। तलगाजरडा स्टेशन से निकलते थे और हमें स्कूल में पता चल जाय तो देखने जाते थे। बापू गाडी में बैठकर कुछ लिखते रहते थे। इस कवि के मुझे बहुत निकट से दर्शन हुए। ऋषि के ही ऐसे शब्द हो सकते हैं-

'होय गना कोई नातना माडी, चारण केरे भाग।'

ये शब्द ऋषित्व के प्रतीक है। यह बापू ने नहीं बोला, उनका स्वान्त: बोला है। शब्द तो हम भी बोलते हैं। पर ये शब्द उनके स्वान्त: में से निकले हैं, 'हे मा, हमारे समाज के हिस्से में गुनाह होते हैं। सब को मुक्त रखना। मैं अकेला भुगत लूंगा माई।' यह काग है। यहां उनका ऋषित्व, साधुत्व, महात्मापन प्रगट होता है। मैं ऐसे मर्म बापू की पंक्तियों में से निकालूं। बाकी, बापू का साहित्य तो आप के पास है। बाप, हम तो सुने और आनंद ले। हमारे पास तो रामनाम है। ऋषि मंत्रदृष्टा होता है, भगतबापू सूत्रदृष्टा है। 'बावन फूलडांनो बाग' सुंदर रचना। वसंतभाई ने स्मरण करवाया। 'झडपेलुं अमी अमर करशे, अभय नहीं करी शकशे'; मैंने भी जब बचपन में पढ़ा था तब स्तब्ध हो गया था कि यह कैसे लिखा गया होगा इतना पूर्ण सत्य! 'झडपेलुं अमी' यह तो मजादर की मिट्टी ही लिख सके! ऐसे भगतबापू की चेतना के स्मरण में यह कथा आयोजित है। इसमें से मैंने

जो सुना है, पढ़ा है, दिमाग में आयेगा ऐसी बात संवाद के रूप में प्रस्तुत करूंगा। मौज मनायेंगे।

तो बाप, 'मानस-कागऋषि' इस कथा का केन्द्रीय विषय रहेगा। शिव के पास यह प्रश्न आया कि भुशुंडि के पास यह कथा कहां से आई? गरुड वहां सुनने क्यों गए? दोनों के बीच क्या संवाद हुआ? दोनों हरिभगत हैं। अपना भगतबापू है। 'मानस' और 'भगतबापू' के विचार इसमें से कुछ पाने का प्रयत्न करेंगे। कागभुशुंडि, तुलसी या कागबापू, किसी को हम नाप नहीं सकते। जितना पा सके उतना पा ले। हम अपने आंतरिक विकास और विश्राम के लिए नौ दिनों का सदुपयोग करेंगे और कुछ आगे बढ़ेंगे। जीवन का महारस पायेंगे।

सभी कथा सुनने आईयेगा। आसपास के गांवों से आए हुए आप सभी को मेरा निमंत्रण है कि यहां से प्रसाद लेकर जाईयेगा। बापू का भंडारा है। दोपहर में हरिहर करना है। कथा में न आए तो भोजन के लिए आईए। क्योंकि वह भी रामस्मरण है। बाप! मैं कहूं और आप सुने, स्मरण इतना ही नहीं है।

मैंने अपने जीवन में अनुभव किया है कि 'रामायण' सात प्रकार की समृद्धि देता है। हमें ऐसी समृद्धि प्राप्त करनी हो तो कथा में आना चाहिए। यहां भजन और भोजन का सेतुबंध है। रामकथा के आश्रय में आनेवाले को धन-समृद्धि प्राप्त होती है। यह प्रलोभन नहीं दे रहा हूं। आप पठन करे और कुछ ना मिले तो शिकायत करें! यहां धन समृद्धि मानी 'राम रतन धन पायो।' यद्यपि वो धन भी मिलें। यहां स्लीपर की पट्टी में सूई अटकाकर मैं पढ़ने जाता था और आज मुझे चार्टर प्लेन मिलता है! यह समृद्धि नहीं तो ओर क्या है? यह तो मेरे जीवन का सत्य है, साहब! यह तो कोई इस ग्रंथ का आश्रय करे तो उसके जीवन का भी सत्य हो सकता है। इसमें दो राय नहीं है। यह ('रामायण') कोई मेरे अकेले का नहीं है; जिसको छूएगा उसे सोना कर देगा। यह धन समृद्धि भौतिक हो या आंतरिक दैवी संपदा हो, कोई हर्ज नहीं है।

दूसरा, इस ग्रंथ द्वारा संग समृद्धि प्राप्त होती है। 'रामचरित मानस' का आश्रय करे उसे सुंदर संग की प्राप्ति होती है। आज बड़ा प्रश्न है कि संग किसका करे? किसके साथ बैठे? 'रामायण' का रसपान करे, गायन करे उसका सुंदर संग हो जाय। फिर उसे कुसंग अच्छा नहीं लगता। उसकी संग समृद्धि बढ़ती है। सोहबत अद्‌भुत होती है। 'रामायण' का गायन करते-करते मजादर के फटहा पियाले के कवि को आई सोनल की कितनी बड़ी समृद्धि मिली! आई माँ के प्रति कितना पूज्यभाव था! उन्होंने आई माँ के लिए अद्‌भुत लिखा है। धन समृद्धि, संग समृद्धि और ज्ञान समृद्धि। मैं उपनिषद के ज्ञान की बात नहीं कहता। संक्षेप में कहूं तो समझदारी की वृद्धि। हमारी समझ बढ़ती है। 'रामायण' संग से विवेक वृद्धि होती है। शील बढ़ता है, मजबूत होता है। हमें जीने का तरीका समझ में आता है। चौथी, त्याग समृद्धि है। वेद कहते हैं, दो होथों से कमाओ और चार होथों से खर्च कीजिए। ऐसी वृत्ति यह शास्त्र देता है; त्याग की स्पर्धा जगती है। पांचवीं तंदुरस्ती की समृद्धि। मेरा सत्तरवां शुरू हो गया है! 'जासु नाम भव-भेषज हरन घोर त्रेशूल।' ताकत देता है। बुखार आए तो दवाई लेनी चाहिए। डोक्टर की सलाह लीजिए, दवाई लीजिए। साहब, मेरा अनुभव कहता है कि दो चौपाई हृदय से गा ले तो कष्ट दूर होता है। साहब, जीवन-मृत्यु का कष्ट उतर जाय तब सिर दर्द किस बिसात में है? छठ्ठी समृद्धि, दूसरों के अपराध को क्षमा कर देना। यह शास्त्र क्षमा समृद्धि देता हैं। सातवीं सेतुबंध की समृद्धि है। सब को जोड़ने की समृद्धि। वेदों ने घोषणा की 'सं गच्छध्वं'; साथ चले, साथ में गति करे।

वे यही अनुभव करते हैं जो इस शास्त्र का आश्रय लेते हैं। आज से मजादर के प्रांगण में, कागधाम

के आंगन में यह कथा हो रही है तब हमारी प्रवाही परंपरा अनुसार प्रथम दिन वक्ता को माहात्म्य कहना चाहिए। ग्रंथ का परिचय देना चाहिए कि ग्रंथ क्या है? 'रामचरित मानस' का परिचय क्या दे? दुनिया जानती है। वाल्मीकि ने 'रामायण' के सात भाग कर 'कांड' नाम दिया। तुलसीजी ने भी सात भाग कर 'सात सोपान' नाम दिया। 'सोपान' मानी सीढ़ी। कागबापू भी कहते हैं, 'अमे दादरा बनीने खीला खूब खाधा, चडनारा कोई ना मळ्या।' तुलसीजी कहते हैं, 'सरग नरक अपवर्ग निसेनी।' इस शरीर को सीढ़ी कहा है। मुझे लगता है कि भगतबापू ने इस 'रामायण' की सीढ़ी ली। सीढ़ी दो तरह के काम करती है; वह उपर भी ले जाती है और कार्य पूरा होने पर हमें नीचे भी ले आती है। 'रामायण' की सीढ़ी कहती है कि उर्ध्वगमन करने के बाद पुनः लोगों के बीच आ जाना। उपर ही मत रहना। वसंतभाई ने कहा यह कवि गगनविहारी था फिर भी लोगों के बीच आए। उन्होंने पुनः इसी मिट्टी पर पैर धरें।

तो ऐसी सात सोपान की सीढ़ी है। तुलसीजी को सात अंक प्रिय है। शुरू के सात श्लोक लिखे हैं। 'उत्तरकांड' में गरुड ने भुशुंडि से सात प्रश्न पूछे हैं।

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।

सारस्वतों को कितना आनंद होता है कि सर्वप्रथम तुलसी ने वाणी की वंदना की। बाद में गणेश की। अपने यहां 'स्वस्ति श्रीगणेशाय नमः।' कहा जाता है। सारस्वतों का गणेश तो उनकी वाणी है। शब्द ही गणेश है। भगतबापू ने जगत को कागवाणी दी। फिर तुलसी को हुआ कि संस्कृत में तो आदि कवि ने 'रामायण' लिखी है पर मुझे तो लोगों के बीच जाना है। श्लोक को लोक में स्थापित करना है। उसे श्लोक जितना दरज्जा देना है। अतः तुलसी सीधे लोकबोली में उतरते हैं। पांच सोरठें लिखे हैं। जगद्‌गुरु आदि शंकराचार्य ने भी कहा कि पांच देवों का स्मरण रखना चाहिए। गणेश, गौरी-पार्वती, शिवजी, विष्णु, सूर्यनारायण। तुलसी ने शास्त्र का आरंभ लोकभाषा-लोकबोली में किया है। प्रथम प्रकरण गुरु वंदना का है। सर्व प्रथम गुरुवंदना की है। मुझे दलपत पढियार याद आते हैं, उन्होंने 'अस्मिता पर्व' के प्रवचन में कहा था, गुरु कमजोर हो सकता है, गुरुपद नहीं। यह देश व्यक्ति का नहीं, उसके पद का पूजन करती है। साढ़े पांच सौ साल पहले तुलसी ने कहा था। लोग तुलसी को लकीर का फकीर कहते हैं! राजापुर जाकर प्रायश्चित्त करना चाहिए। लकीर का फकीर नहीं है। तलगाजरडा आकर पूछिए! प्रथम ही गुरुपद कहा-

बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।।

गुरुपद की धूलि पर बहुत भाष्य लिखे हैं। चौपाईओं में शास्त्र शुरू हुआ तब गुरुपद, गुरुपदरज, गुरुपदनाखून, ज्योति, वंदना। अपने गुरु की याद आने पर आंखें पवित्र होती है। 'रामायण' में आठ प्रकार के अश्रुओं का वर्णन है। गुरु-शिष्य के बीच में क्या लेन-देन? दक्षिणा तो परंपरा है। शिष्य गुरु को आशा देता है और गुरु आंसू देता है। मेरे तुलसी ने सात प्रकार के आंसू की बात कही है। यह अद्‌भुत ग्रंथ है, साहब! इतने बरसों से गा रहा हूं फिर भी ऐसा लगता है, मात्र मंगलाचरण ही किया है। गाया ही नहीं है। अभी तो पता नहीं कितने जनम लेने पड़े! और हमें लेने हैं।

मैं वैज्ञानिकों से कहता हूं सात प्रकार के आंसूओं की छानबीन करें। कहां-कहां केमिकल बदलते हैं! अणु की खोज हुई। अब आंसू पर होनी चाहिए। जिस दिन आंसू पर खोज होगी, अहिंसा नष्ट होगी। करुणा की स्थापना होगी। अणु की खोज हिंसा को स्थापित करती है। आंसू की खोज करुणा की स्थापना करती है, हर्ष, शोक, योग, वियोग, क्रोध, बोध और भजन के ऐसे

सात प्रकार के आंसू है। तो, शिष्य-गुरु की लेन-देन क्या? आशा और आंसू की। कई विद्वान गुरु को एजन्ट बताकर उपेक्षा करते हैं! मुझ जैसों को तो गुरु की बहुत जरूरत होती है। सीधा जाना हो तो जा सकते हैं! ऐसे गुरुपद की वंदना तुलसीजी ने की है। भगतबापू ने मुक्तानंदजी की वंदना की है।

तुलसीजी कहते हैं, मेरे गुरु की चरणरज से मेरी दृष्टि को आंजकर विवेकदृष्टि को निर्मित कर मैं रामकथा कहूंगा। फिर सब की वंदना करने लगे। विवेकदृष्टि आने के बाद सभी वंदन योग्य लगते हैं। मैं तो संक्षेप में इतना ही विचार करूं कि हमें दूसरों की निंदा करने का मन हो तो इतना ही सोचना है कि अभी तक आंख बिगड़ी हुई है। यह सीधा-सादा हिसाब है। गुरुकृपा से यदि आंख पवित्र हो तो पूरा जगत वंदनीय लगता है। गुरुकृपा, शिवकृपा और माता की कृपा से आंख को पवित्र कर सब की वंदना करे। तुलसीजी ने सर्व प्रथम ब्राह्मणों की, फिर साधुओं की, दुष्टों की, शठों की, खलों की, निशिचरों की वंदना की। फिर तुलसीजी गर्भगृह में पहुंचते हैं। अब हनुमानजी की वंदना अनिवार्य है।

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।

हनुमानजी प्राण के प्रतीक है। 'रामचरित मानस' के पंचप्राण पान, अपान आदि उनके रक्षक तत्त्व हनुमानजी है। 'रामायण' का एक प्राण भरत है। हनुमानजी ने भरत के प्राण बचाए। थोड़ी देरी हो जाती तो भरत प्राण त्याग देते। भगवती सीता 'रामचरित मानस' का प्राणतत्त्व है। वहां भी हनुमानजी वक्त पर न पहुंचते तो जानकी प्राण त्याग देती। 'मानस' के प्राण लक्ष्मणजी है। हनुमान औषधि न लाते तो लक्ष्मणजी प्राण गंवा देते। 'रामायण' के बंदर और भालू ये सभी प्राणतत्त्व है। जब समुद्र तट पर वे क्षुधा-तृषा से आर्द्र होकर प्राण छोड़ने की तैयारी में थे तब हनुमानजी ने अगवानी लेकर स्वयंप्रभा के पास ले जाकर प्राण बचाए थे। सभी के प्राणों की रक्षा हनुमानजी करते हैं। उनके आश्रय में जाना चाहिए। 'मैं नहीं मानता', ऐसा कहने के लिए सांस तो लेनी पड़े और सांस पवनरूप हनुमानजी है।

हनुमानजी चारों युग में है; चारों वर्ण में है, चार वेदों में, चार पुरुषार्थ में, हर जगह हनुमानजी की स्थापना है। 'रामायण' में वे बार-बार ब्राह्मण का रूप लेते हैं। अत: वे ब्रह्म है। 'गीता' में और भगतबापू ने क्षत्रिय के लक्षण वर्णित किए हैं ये सभी हनुमानजी में है। तुलसी तो उन्हें राजपूत कहते हैं। क्षत्रिय के युद्ध कौशल्य, वीरता, गांभीर्य जैसे लक्षण इस महापुरुष में है। बहुत होशियार है। होशियार वह है, जो ब्याज के ब्याज में हमें पार ही न लगने दे! जगत में यही एक ऐसा आदमी पैदा हुआ जिन्होंने राम को ऋणी रखे। अत: पक्का वैश्य-वणिक है। चौथा, बंदर का रूप लिया। सेवाव्रत लिया। जिसकी हम बड़ी उपेक्षा करते आए हैं और बड़ा दंड भुगतना पड़ता है, ऐसे एक समाज सेवक में हनुमानजी की स्थापना हुई।

हनुमानजी सतयुग में है। त्रेता में बंदर के रूप में है। द्वापर में अर्जुन की पताका में है। कलियुग में कथा में है। बुद्धिजीवी पूछते हैं कि कथा में हनुमानजी होते हैं? मैं कहता हूं कोई है। वह कोई मानी हनुमान। कृष्णमूर्ति और प्रज्ञाचक्षु शरणानंदजी बनारस हिन्दु विश्व विद्यालय में जब मिलना हुआ तब कृष्णमूर्ति ने इस फक्कड साधु के लिए दरवाजा खोला। उन्होंने कृष्णमूर्ति से कहा, आप जिसे जीवन कहते हैं उसे मैं परमात्मा कहूं तो आप को कोई आपत्ति है? आप उस तत्त्व को जीवन कहते हैं, चैतन्य कहते हैं, मैं उसे परमात्मा नाम देता हूं। न वक्ता, न यजमान की हैसियत है कि नौ दिन पार लगा सके। वह जो कोई बैठा है, उसी की कृपा है। हनुमानजी धर्म का मूल है शंकर के रूप में। हनुमानजी सार्थक अर्थ है। काया सुवर्ण है। 'हेमशैलाभदेहं'; हनुमानजी काम के प्रतीक है। काम से क्षुभित भी हो और काम का नाश भी करे ऐसे शांकरीय तत्त्व हनुमान है। अत: सर्वत्र हनुमानजी दिखते हैं। 'मनोजवं', मन में भी है। 'बुद्धिमतां वरिष्ठं', बुद्धि में भी हैं। इनके जैसी चित्त की एकाग्रता किसकी होगी? अत: चित्त में भी है। अच्छे अच्छों का अहंकार तोड़ डाले ऐसे यह हनुमान है। ये चारों तत्त्व इनमें है। अंत:करण चतुष्टय के केन्द्र में भी इसका सेवन करना पड़े; ऐसे जितने चतुष्कोण है इसमें हनुमानजी की बैठक हैं। तुलसीजी ने 'विनय पत्रिका' के पद में लिखा हैं-

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
सकल अमंगल मूल-निकंदन।।
पवनतनय संतन-हितकारी।
हृदय बिराजत अवध-बिहारी।।

और हनुमानजी माँ भगवती भी है। अहिरावण की कथा में यही हनुमान ने देवी का स्वरूप धारण किया है। तो वह शक्तितत्त्व भी है। हनुमानजी अग्नितत्त्व भी है।

प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।।

एक बात है कि जो हनुमानजी की साधना करना चाहते हैं उन्हें बहुत कठिन षट् और फट् जैसी साधना में पड़ना नहीं चाहिए। हनुमानजी की तांत्रिक साधना में कलियुग में जाना नहीं चाहिए। साढ़े चार सौ साल पहले लिखे गए 'हनुमान चालीसा' का पाठ करना। संभव हो तो ग्यारह बार, न हो तो नौ बार, आख़िर एक वक्त। वह भी न हो तो जो करते हो उसकी निंदा न करें। मैं आप को एक रहस्य की बात कहूं। भजनानंदी को कैसे परखे? माला, तिलक से या कथा करे, श्लोक बोले तो परखा जाय? मेरी भजनानंदी की परिभाषा यह है कि जो रात को कम निद्रा करता हो और दिन में निंदा न करता हो वह भजनानंदी है। वंदना में सीतारामजी की वंदना आती है। इससे भी आगे सूक्ष्म स्वरूप की वंदना आती है वह नाम महाराज की वंदना है, जो अंतिम वंदना है। परमात्मा का नाम। फिर आप कोई भी नाम लीजिए। प्रथम दिन हनुमंत-वंदना तक कथा होती है। तो हमने यह वंदना की है। कल नियत समय पर कथा शुरू होगी। सुबह सब कथा सुनने आईयेगा। न आ सके तो ग्यारह बजे प्रसाद लेने अवश्य आईए। क्योंकि यह भगतबापू का भंडारा है, बाप!

'मानस' का कागऋषि है ऐसा ही एक दूसरा ऋषि हुआ है। यह दाढ़ीवाला ऋषि ही तो था न? यह तो हम समकालीन समय में पहचान नहीं पाते! 'भेगा बेसनारा भरमाणा, मोटानां तळियां ना मळे।' सामने बैठे हो फिर भी हम चुक जाते हैं, साहब! और कोई मोती पिरो लेता है! कागबापू की वेशभूषा किसी वैष्णव साधु की लगती है। ऋषि मंत्रद्रष्टा होता है, भगतबापू सूत्रद्रष्टा है। 'झडपेलुं अमी अमर करशे, अभय नहीं करी शकशे।' मैंने जब बचपन में यह पढ़ा तो स्तब्ध हो गया था कि यह कैसे लिखा गया होगा इतना पूर्ण सत्य!' 'झडपेलुं अमी' यह तो मजादर की मिट्टी ही लिख सके!

मानस-कागऋषि
:: २ ::

हंस-ऋषि की पहचान सरल है, काग-ऋषि की पहचान कठिन है

'मानस-कागऋषि' ; आप सब जानते हैं फिर भी कथा की भूमिका का स्पर्श कर लें। कैलास पर शिवजी को पार्वती ने रामकथा पूछी। साथ में नौ प्रश्न पूछे। ऐसा कहा जाता है कि नौ प्रश्नों के उत्तर में नौ दिनों की कथा तय हुई। एक-एक दिन में एक-एक प्रश्न का उत्तर शिव ने दिया। सभी प्रश्नों के जवाब दिये। पर एक प्रश्न का जवाब शंकर ने उड़ा दिया। उस प्रश्न में थोडा विवाद था। बाप, यह शास्त्र संवाद का शास्त्र है। तुलसी को विवाद, दुर्वाद, अपवाद में प्रवेश करना ही नहीं है। पार्वती ने पूछा कि रामराज्य के बाद रामजी ने एक आश्चर्य का सर्जन किया। राम प्रजा सहित सरयू में प्रवेश कर गए यह कथा कहिए। वह कथा शिवजी ने उड़ा दी। इस तरह से कथा का रसपान करवाया कि पार्वती को इस प्रश्न के जवाब जानने की इच्छा ही नहीं रही।

एक वस्तु बाप, यह समाज हमें धन्यवाद दे, हम में ऐसी योग्यता हो या बुद्धिपूर्वक हमने नेटवर्क आयोजित किया हो कि समाज हमें सन्मानित करे। यह बात अलग है। सच्चा धन्यवाद समारंभ तो तभी कहा जाय, आदमी अपने पवित्र कार्य के लिए डकार ले। यूं तो खुद के हाथ से पीठ थपथपानेवाली बात है। दूसरे थपथपाए ये तो पीछे खड़े होनेवाले होते हैं! पीछेवाले कब निकल जाय यह कहा नहीं जा सकता! 'रामायण' में यह बड़ा प्रकरण है, धन्यवाद प्रकरण। मैं इस पर कभी बोलूंगा, 'मानस-धन्यवाद।' शंकर ने जब कथा की शुरूआत की तब दो बार पार्वती को धन्यवाद दिया है।

धन्य धन्य गिरिराजकुमारी।
तुम्ह समान नहिं कोउ उपकारी।।

यूं तो तीन बार कहना चाहिए। दो बार बोले हैं। बाकी शंकर माने 'चपटी भभूत में है खजाना कुबेर का', ऐसे उदार महादेव! उन्होंने धन्यवाद देने में कंजूसी क्यों की? यह बड़े हृदयधनी धन्यवाद का ढेर लगा सकते थे। तीसरी बार कहा होता तो? मेरा महादेव कृपण बना? नहीं, उन्होंने कुशलता दिखाई। उन्होंने जगत को शब्द कौशल्य दिखाया। शब्दों को व्यर्थ न गंवाये। मतलब कि आप समाज को दो बार ही धन्यवाद देने दे। तीसरी बार तो आपका गुरु जब हस्त स्पर्श करे तब अपने को धन्यवाद दीजिए, जब गुरु हस्ताक्षर कर दे कि आप इस धन्यवाद के योग्य है। यहां पार्वती ने कहा है। अपने को तीन बार धन्यवाद दिए हैं।

धन्य धन्य मैं धन्य पुरारी।
सुनेउँ राम गुन भव भय हारी।।

हे भूतभावन, हे महादेव, मैंने राम गुणगान सुने। मैं स्वयं को तीन बार धन्यवाद देती हूं। भगवती ने एक वैश्विक संदेश दिया। पार्वती ने कहा, 'आपने मुझे रामकथा सुनाई।' अब मेरे मन में नया संदेह जगा है कि जिनमें वैराग्य है, ज्ञान है, विज्ञान है रामचरण में दृढ प्रीति है, ऐसे कागऋषि को कौवे का शरीर क्यों मिला? दूसरा प्रश्न यह है कि मुनिवृंदों को, परमहंस के समूह को छोड़कर यह गरुड जिस पर भगवान विष्णु बैठते हैं, माने जिनके पंख वेद बोलते हैं, जिनकी उड़ान वेदगान के साथ हो ऐसे खगराज ने महात्माओं को छोड़कर कौवे से कथा क्यों सुनी? कागभुशुंडि को यह कथा कहां से मिली?

एक वस्तु याद रखिए। हमें कहीं से कुछ मिला है यह बात हम अहंकार के कारण भूल जाते हैं। दो वस्तु विघ्नकारी है, राग के कारण बिन पहचानी ममता और जानकारी के बाद की मूढ़ता। ये दो वस्तु हमें अज्ञानी रखती है। बाकी हमें किसीने कुछ दिया होता है। रागात्मिका ममता हमें स्वीकारने नहीं देती और हम अवसर चुक जाते हैं। इस मजादर की कागभूमि में कागऋषि का रहस्य क्या है? इसे उद्घाटित करने के लिए इस कथा का आयोजन किया गया है। कागऋषि का रहस्य हम चुक न जाय। अपनी दुनिया में कितने ऋषि है? १ देवर्षि, २ महर्षि, ३, ब्रह्मर्षि, ४ राजर्षि और पांचवां मेरे मत से प्रेमर्षि। आज नया विषय है, कागऋषि। हंसऋषि के पास जाना सरल है। वहां वातावरण वैसा ही होता है। पर कागऋषि को जानना बहुत कठिन है। कभी परिवार तो कभी गांव, समाज या दुनिया नहीं पहचान सकती। कभी ऐसा योग होता है जब हम सब बातें करने हेतु एकत्र होते हैं।

रहस्योना पडदाने फाडी तो जो।
खुदा छे के नहीं हाक मारी तो जो।

-जलन मातरी

हम सब एकत्र हुए हैं। कथा को सब जानते हैं। आदि कवि वाल्मीकि और उसी परंपरा में तुलसी आते हैं। उसी परंपरा में कितने कुछेक लोक कवि आए! फ़िर काग बापू ने अपने भजन में, गीतों में गाते हुए अनेक प्रसंग खड़े कर आकाशवाणी में राज भवन में कथाएं की है। रामकथा लोक बोली में गाई है। यह हम सब जानते हैं। परंतु अभी तक रहस्य नहीं खुले हैं! यहां पर हम उन्हें विशेष रूप से जाने। कितनी सरल बोली में यह मानव 'रामायण' पर कार्य कर गया! इनमें से कागऋषित्व खोजें। हंसऋषित्व खोजना बहुत सरल है। ज्यादा मेहनत नहीं करनी पड़ती।

एकरंगा ने ऊजळां भीतर बीजी न भात।
एने व्हाली दवली वात, कहेजे दिलनी कागडा।

इस दोहें का भाष्य करने जैसा है। एकरंगा आदमी कौन? एकरंगा कवि कौन? एकरंगा साधु कौन? एकरंगा विद्वान कौन? एकरंगा देश का नागरिक कौन? नेता कौन? सरपंच कौन? सभ्य कौन? पति कौन? पत्नी कौन? पुत्र कौन? गुरु कौन? चेला कौन? एकरंगा वक्ता-श्रोता कौन? ढूंढो ढूंढो रे साजना!'

भगतबापू इसका भाष्य कर दे कि कौन एकरंगा? उनके मन में क्या होगा? कितना सुंदर शब्द है 'ऊजळो'; सफेद या श्वेत नहीं। धोळां सामने काला और श्वेत के सामने श्याम आए। ऊजळा के सामने कोई न आए। ऊजळो मानी ऊजळो। एक ही शब्द में शास्त्र समाया हुआ है। कौन ऊजळा? 'जेने भीतर बीजी न भात।' सामने आए तो पैर छूए और फिर पैर खिंचने भी लगे जैसा मौका मिले! ये एकरंगा नहीं हैं। एक के सामने एक बात और फिर दूसरी बात! ऐसा क्यों? भगतबापू को कितनी पीडा रही होगी? भीखुदानभाई, भगतबापू टी.बी.अस्पताल में थे तब मैं ख़बर पूछने गया था। साहब, कागऋषि पीडित था। मुक्तानंद का स्मरण करता था। इसे एकरंगा कहते हैं। नहीं तो गुरु बदलने में देरी नहीं लगती! बदले ही नहीं बेच ड़ालते है! हां, कभी गुरु बदलने जैसा होता है! बलिराजा ने शुक्राचार्य का त्याग किया कि परमार्थ में विघ्न डाले वह गुरु नहीं है। हरि ठगने आए थे। अरे! सामान्य लोग ठगने आए तो ठग जाइए। भगतबापू कहते हैं-

तारा हंसोना टोळामां सौने हेळवजे,
पण रहेजे तुं तारे काग एकलो।
तारा सुंदर वाजिंत्रो मित्रोने दई देजे,
लई लेजे तारो तंबूर एकलो।

यह तंबूर कहां से आया? शहनाई-हार्मोनियम क्यों नहीं? कहीं गुरु का तार बजता है। कभी-कभी सर्जक को उसके अज्ञात चित्त में क्या स्फुरण होता है यह पता नहीं चलता। ऐसे सर्जन होते हैं इसे परखने हम एकत्र हुए हैं। प्रभु की कृपा कि काग के आंगन में हम सब कैसे इकठ्ठे हुए हैं? सभी सद्भावनापूर्वक इकठ्ठे हुए हैं। इस मजादर के टीले पर एक समुद्र था। वह मीठा समुद्र था। मैंने अभी समन्वय की सभा में कहा था कि सुर-असुर इकठ्ठे होकर समुद्र मंथन करते हैं-

मंथननी गोळीने तळिये एमां झेर हशे तो नीकळशे
कां जग सळगीने भस्म थशे कां कोई जटाधर जागी जशे।

इस दाढीवाले के सिवा ऐसे सीधे-सादे शब्द में कौन लिख पाए? गंगाजल की तरह कविता बहे, उसे घूमाते नहीं। उसमें नम्रता हो तो स्वयं चलकर अपने घर तक आए। साहब, कविता ऐसी होती है। दानव इकठ्ठे होकर समुद्र मंथन करे तो चौदह रत्न निकले। पौराणिक कथा है। अमृत भी निकले। ज़हर भी निकले। इसके बदले सुर-सुर इकठ्ठे होकर मंथन करते तो ज़हर निकलता ही नहीं। अमृत ही निकलता। पूरा समुद्र अमृतमय हो जाता। परंतु सुर और सुर इकठ्ठा हो यही कठिन है, साहब! एकरंगा और ऊजला; क्या अर्थ करेंगे एकरंगा का? जिसका आंतर्बाह्य एक हो। हम कितने रूप लेकर घूमते हैं! इसीलिए शायद हमारे बीच कोई आकर चला जाता है और हम पहचान नहीं पाते! फिर बहुत देरी हो जाती है। मुझे 'ऊजळा' शब्द बहुत प्रिय है। उज्ज्वल वह है जिसे हम काला नहीं कर सकते। जो काला हो जाय, समझिए वह ऊजला था ही नहीं, श्वेत था। 'एकरंगा ने ऊजळा जेने भीतर बीजी न भात।' हम क्यों इसमें से मुक्त नहीं हो सकते? एकदम सरल है। 'एने व्हाली दवली वात, कहेजे दिलनी कागडा।' यही क्राइसिस है। किससे बात करे यही बड़ा प्रश्न है! आप कहे एक टोन में और दूसरे ही टोन में अर्थ ले ले! कथा का मंथन हमें कोई एकरंगा प्राप्त करा दे। हृदय की बात ऐसे आदमी से करनी चाहिए। ऐसा आदमी सब को इकठ्ठा कर सके। भगतबापू ने सब को इकठ्ठा किया। जूनागढ में साहित्य परिषद थी। दादबापा ने 'हंस भेगा भेळव्या' ऐसी रचना की थी। बहुत क्रांतिकारी कार्य हुए। इसका दस्तावेज होना चाहिए। यह टीले पर बैठने का आनंद है। एक ओर पीपावाव की पताका फहरा रही है। एक ओर वैष्णवी पघडीवाला कवि

यहां बैठा है। उसके हुक्के में गड़गड़ाटी थी। साहब, वह अमृत का समुद्र था। एसे कागऋषि को पहचानने का यह प्रयास है नौ दिनों तक।

तो देवर्षि, राजर्षि, ब्रह्मर्षि, महर्षि ऐसे शास्त्रीय नाम हमारे पास हैं। उसमें एक एड हुआ है, प्रेमर्षि। पर यह तो कागर्षि! हंस की पहचान सरल है। मुझे भगतबापू की सभी कविताएं पसंद है। पर 'हंस किनारा छोडी जशे' पीडादायी है, वेदनामय है। रोम-रोम चीखता हुआ पीडा भुगत रहा है। सर्जक शाप न दे पर उसकी वेदना में से एक आह निकलती है। यदि आप एकत्र नहीं रहोगे तो खोट का धंधा यह रहेगा कि हंस किनारा छोड देगा। हे तालाब के पानी, इकठ्ठा रहना। इसका विपरीत परिणाम यह होगा कि हंस छोड़कर चला जाएगा तो आप को बगुला की संगत में रहना होगा! अत: हम कागऋषि के छोटे चबूतरे पर बैठे हैं। यह सब आयोजित होता है। मोरारिबापू की इच्छा हुई। ठीक है, ठाकोरजी ने कृपा की। यह दरजी तैयार हो गया! यह धरती पुकारती है। साहब, मैं तो गुरुनिष्ठा से जी रहा हूं। यह होने को होता है तब होकर रहता है। कुदरत इकठ्ठा करती है। बाकी हो ही नहीं सकता। मैं पचपन साल से कथा करता हूं। क्यों मजादर के टीले पर न हुई? क्यों यहां से कोई कथा लेने नहीं आया? कागबापू की चेतना कहती होगी कि सभी इकठ्ठे होकर रामगुण गाईये।

इस दिवस और तिथि पर हंमेशा काग के आंगन में काग की बातें होती है। कागबापू के पुण्यनाम से हम कोई न कोई इस क्षेत्र के विद्वान की वंदना करते हैं। मुझ से पूछते हैं, कागबापू अवोर्ड का कहां से सूझा? यह सब होना होता है तब होता है। यह प्रवाह तो आना ही था। ईश्वर की कृपा से हम खड़े थे, पानी आया, हमने स्नान कर लिया! न तो मोरारिबापू करे, न चिमन वाघेला करे। कितना अच्छा कि एक पुकार लगाई और सब ने हां भी भर ली। सब तलगाजरडा आए। निश्चय हुआ। तलगाजरडा का साधु खुश हो पर भगतबापू प्रसन्न हो गए होंगे और यह सोनल माँ तो बैठी है।

सोनलमा आभ कपाळी,
भजां तने भेळियावाळी।

भगतबापू जो शब्द प्रयुक्त करते हैं जगदंबा सोनल के लिए; 'आभ कपाळी' सिवा अन्य शब्द का उपयोग हो ही नहीं सकता। अविनाश व्यास कहते हैं, 'माडी तारुं कंकु खर्युं ने सूरज ऊग्यो।' तो यह सब होना ही था। आईमाँ के प्रताप से, सभी के सुंदर प्रयत्न से। मूल में पार्वती की जिज्ञासा, 'हे प्रभु, काग को यह कहां से मिला?' कारण? एक कोष्टक दिया है 'रामायण' में। ऐसे तीन कोष्टक है। जेब में डालकर घूमने जैसे हैं। भवानी कहती है, 'हे महादेव, एक हजार आदमीओं में कोई एकाद व्यक्ति धर्मव्रत होती है। यहां जो 'हजार' शब्द है वह सांख्य शास्त्र है या लोकबोली है? खोजना पड़ेगा।

नर सहस्र महँ सुनहु पुरारी।
कोउ एक होइ धर्म ब्रतधारी।।

एक हजार आदमीओं में कोई एक धर्मव्रतधारी हो। एक हजार आदमी धार्मिक तो है ही पर धर्मव्रतधारी एक ही होता है। तलगाजरडा एसा अर्थ करे कि एक हजार धार्मिक में धर्मव्रती कोई बिरला ही होता है। हजार आदमीओं में धार्मिक वस्त्रधारी हो पर धार्मिक वृत्ति का तो कोई एक ही होता है। धर्म नियमधारी नहीं कहा है, धर्मव्रतधारी कहा है। नियम बांधता है, व्रत मुक्त रखता है। कृष्ण को सत्य बोलना ऐसा नियम नहीं था पर व्रत था। व्रत में परिवर्तन हो सकता है। उसे लगा कि यहां सत्य बोलने से जगत का अकल्याण होगा तो उसने व्रत

में परिवर्तन किया है। नियम बांधता है, जड़ बना देता है। कलियुग में नियम धारण करने की अपेक्षा व्रती बनना चाहिए। वेशभूषा परंपरावादी है। विचारगंगा जैसे देशकाल को अनुकूल प्रत्येक घाट को स्पर्श करना चाहिए। वेश की महिमा है। जैनाचार्य चित्रभानु ने क्रांति की। उन्होंने कहा कि वेश का साधु बनने की अपेक्षा वृत्ति का साधु बनना ज्यादा अच्छा है। प्रश्न है कि धर्मव्रतधारी मानी व्रत कैसे? पांच व्रत। यूं मानिए तो कठिन और यूं सरल। ये पांच जिनमें हो वह हजारों में एक है। 'मानस' का निचोड गुरुकुपा से लगा वह तीन व्रत सत्य, प्रेम, करुणा है। हो सके वहां तक सत्य बोले।

एवा न वेण काढो, के कोइना दिलने ठेस वागे।
वाणी उपर बधो छे आधार मानवीनो।
जो जो गुमावशो ना एतबार मानवीनो।
एळे न जाय जो जो अवतार मानवीनो।
-नाज़िर देखैया

तो, सत्य ये धर्मव्रत का लक्षण है। हम मनुष्य है, कमज़ोर है। बिना कमज़ोरी का तो परमात्मा होता है। मात्रा के हिसाब से हम में सत्य ज्यादा होना चाहिए। परिपूर्ण तो गांधी हो सकता है। सत्यव्रतधारी हल्का फुलका रहता है। कोई कहे, 'मैं सत्य ही बोलता हूं और करता हूं।' अति भार से कहे तो समझना, झूठा है। भीखारामकाका के शब्दों में कहूं तो 'उको' है! सन्मानसूचक शब्द है! गांधीबापू हल्के फुलके थे। सत्य मानव ऐसा ही होता है। महापुरुष के नाम से वाद शुरू हो जाय तो वह सब बहुत गंभीर हो जाते हैं! सत्य का आश्रय हो।

दूसरा, सब के प्रति प्रेम यह दूसरा धर्मव्रत है। तीसरा करुणा। किसीकी हिंसा नहीं। किसीको दु:खी न करे। यह धर्मव्रत है। चौथा, मौनव्रत है। नफरत न करे। स्वीकारे तो भी ज्यादा न बोले। यह तो दुनिया को पता चल ही जाता है। इसके लिए विज्ञापन की आवश्यकता नहीं रहती। आज नहीं तो कल। हम में दयाभाव जगे। किसीकी पीडा देखकर करुणाभाव जगे। इसका विज्ञापन नहीं होता। चौथा मौनव्रत होता है। स्मृतिकारों ने दस लक्षण बताए हैं। 'मानस' के आधार पर मेरे विकास-विश्राम हेतु निकट पड़ते हैं। विनोबा भी कहते हैं सत्य, प्रेम, करुणा है। तीनों मुखर नहीं, मौन है। हमें अपने मौन पर भी भरोसा नहीं होता अत: बोलना पड़ता है। इसीलिए मुखर हुए। लोग मौन समझ नहीं पाते अत: मुखर हुए। शंकराचार्य की परंपरा में तो मौन व्याख्यान होता है। गुरु बोलता ही नहीं है फ़िर भी शिष्य के संशय नष्ट होते हैं। आकाश नहीं, बादल गरज़ते हैं! आकाश तो नितांत शून्य है; गुबारा है, गेब है। मौन और शून्य में से जो निकले वह शब्द है। शब्द ब्रह्मपुत्र है, ब्रह्म का सहोदर है। सप्ताह में, पंद्रह दिन में एक बार मौन रहिए।

पांचवां व्रत उदासीनता है। एक प्रामाणिक दूरी होनी चाहिए। ऐसा साधक धर्मव्रती कहलाता है। यूं तो गांधीजी ने हमें ग्यारह व्रत दिए।

सत्य, अहिंसा, चोरी न करवी, वणजोतुं नव संघरवुं,
ब्रह्मचर्य ने जाते महेनत, कोई अडे ना अभडावुं,
अभय, स्वदेशी, स्वादत्याग ने सर्वधर्म सरखा गणवा,
अे अगियार महाव्रत समजी नम्रपणे नित आचरवा।

चोरी न करनी। प्रज्ञाचोरी न करनी। किसीका सूत्र, विचार हो उसका नाम लेकर कहना। पाश्चात्य पुस्तकों में से अवतरण लिया हो, फिल्में बनानी ये सब प्रज्ञाचोरी है। 'वणजोतुं न संघरवुं।' एक बार जैनों ने निमंत्रण भेजा। कहा, 'बापू, आप अपरिग्रह पर बोलिए।' मैंने कहा, हम ठहरे संसारी। हम कैसे बोले? हमें तो साल भर के अचार, अनाज भरने की इच्छा होती है।' मुझे उकसाया; कहा, 'आप चाहे इस विषय पर बोल सकते हैं।' मैं उत्तेजित नहीं हुआ। यदि हुआ होता तो टिक नहीं पाता! मुझे मेरे गुरु ने प्रेरित किया और अपरिग्रह पर बोलने को कहा। जिसे 'रामायण' पर बोलना आ जाए वो किसी भी विषय पर बोल सकता है। इस 'रामायण' की सर्व कृपा है। मैंने प्रवचन में कहा, 'संग्रह चार प्रकार के होते हैं। इसे हम जितना कम करे उतने ही गृहस्थी होने पर भी त्यागी कहे जाये। एक, किसी वस्तु का अति संग्रह न करना। जरूरत अनुसार रखिए। साल भर चले उतने कपड़े रखिए। दूसरा, वसु का संग्रह न करना। वसु मानी पैसा। हमारे व्यवहार, प्रसंग, निर्वाह, भावि आयोजन यह सब चले इतने पैसे रखिए। तीसरा, विषय का अति संग्रह नहीं होना चाहिए। सोच-समझ रखे। चौथा, विचार का अति संग्रह न करे। इतिहास गवाह है, अति विचारशील लोग अंतिम अवस्था में विकृत-पागल हुए हैं! इसका कारण? मन को विचार का बड़ा गोडाउन बना दिया है!

गांधीबापू का पांचवां व्रत ब्रह्मचर्य। व्रत नहीं, बल्कि ये कडक नियम थे। स्वयं परिश्रम कीजिए; बड़ा व्रत। कोई भी छुए; अस्पृश्यता का बड़ा व्रत। स्वदेशी वस्तु का उपयोग कीजिए। अभय, निर्भयता। स्वादत्याग; बापू यह नहीं चलेगा! बापू की खुराक पहले बहुत थी। फिर तौल-तौल कर खाते थे। कोई कहे, यहां 'स्वार्थत्याग' था। सर्वधर्म समभाव होना चाहिए। सभी को आदर-सन्मान देना चाहिए। यहां दो पेड़, दो डालियां एक समान नहीं है। अस्तित्व पुनरुक्ति में नहीं मानता। ब्रिटन के हाई कमिश्नर के साथ एक मिटिंग थी सर्वधर्म समभाव को लेकर। वहां यह तलगाजरडा ऐसा बोला था, सब को समान कैसे करें? सन्मान कर सके। स्वयं परिश्रमी बनिए। उम्र होने पर जिद्दी मत बनिए। अस्पृश्यता न रखे। मेरे तुलसी कहते हैं-

गनिका अजामिल ब्याध गीध गजादि खल तारे घना।

मेरे पास प्रस्ताव आता है कि 'यह समाज आप से मिलने आता है, मिलेंगे?' क्यों न मिलूं? न मिलूं तो तलगाजरडा की परंपरा लज्जित हो! बुलाइए, सब का स्वीकार है। कहा, 'समाज कैसा अर्थ करेगा?' मुझे मिलने कोई भी आ सकता है। हम सुधारने नहीं, स्वीकारने निकले हैं। गुरुकृपा से हम अपने में जितना सुधार कर सके इतना काफ़ी है। जो पीड़ित, दलित,वंचित, उपेक्षित है, उनके पास धर्म को जाना

एक हजार आदमीओं में कोई एक धर्मव्रतधारी होता है। एक हजार आदमी धार्मिक तो है ही पर धर्मव्रतधारी एक ही होता है। प्रश्न यह है कि धर्मव्रतधारी मानी कैसे व्रत? पांच व्रत। मुझे जो लगा ये तीन व्रत सत्य, प्रेम और करुणा। हो सके वहां तक सत्य बोले। तो, सत्य धर्मव्रत का लक्षण है। दूसरा, सब के प्रति प्रेम। यह दूसरा धर्मव्रत है। तीसरा, करुणा। जरा भी हिंसा नहीं; न किसी को दु:ख दे। चौथा, मौनव्रत। नफ़रत मत करो। स्वीकारो तो भी ज्यादा बोलो मत। मौनव्रत चौथा धर्मव्रत है। पांचवां व्रत उदासीनता है। एक प्रामाणिक दूरी होनी चाहिए।

चाहिए। या वे धर्म के पास आए तो बांहे पसार कर स्वागत करना चाहिए। भगतबापू तो हरिजन के घर जाय तो कहे, 'ये मेरे मामा है।' पहचान बनाए। महापुरुषों ने ऐसा समन्वय किया था। आप महान है तो आप को कोई निम्न दिखना ही नहीं चाहिए। कसौटी आप की है।

यु.पी.-बिहार में आज तक भयानक वर्गभेद है। यु.पी. में कथा थी। मुझे आनंद मिले इसलिए एक गांव गया। गांव की रहावन पर एक घर था। हम सीधे वहीं गए। गरीब परिवार था। बापा और बहन बैठे थे। मेरे साथ गांव के सरपंच भी थे। मन में सनसनी पर बोल न पाए! मैंने गंगाजल देकर कहा, 'बहन, रोटी बना दे।' मैं खटिया पर बैठा। मैंने भिक्षा ली। रास्ते में सरपंच ने कहा, 'बापू, आप को ना नहीं बोल सकते पर आप ने किसके घर भिक्षा ली, पता है?' मैंने कहा, 'भिक्षा में पूछते नहीं। पूछे तो भिक्षा नहीं, योजना कहते हैं!' मैंने कहा जवाब दे, तू अग्नि को पवित्र मानता है? गंगाजल को पवित्र मानता है? कहा, 'हां।' तो चूल्हें में अग्नि था, हाथ में गंगाजल और आंख में आंसू थे। आंसू पवित्र है कि नहीं? कहा, 'हां।' तो इतइतनी पवित्र वस्तु इकठ्ठी हो फ़िर भी अस्पृश्यता रखूं? हमें यह कठिन कार्य करना पड़ेगा, चाहे कितना ही मुश्किल हो।

मैं लंदन जा रहा था। मैंने लंदन के ही लड़के को साथ में रखा था। प्लेन में सीट के बगल में एक भाई दंडवत् करते थे। खड़ा हो; पुनः दंडवत् करे। मैंने उस लड़के से पूछा, 'यह कौन दंडवत् करता है?' उस लड़के ने स्पष्ट कहा, 'वह दंडवत् नहीं, कसरत करता है!' लोग कसरत करते हो पर हमें दंडवत् लगे! भ्रान्ति में मत रहिए। दुष्यंतकुमार का शे'र है-

तमाम जिस्म मेरे बोझ से दोहरा हुआ था।
मैं सजदे में था, तुम्हें धोखा हुआ होगा ।।

तो, 'मानस-कागऋषि'; उसके आधार कथा-गायन चल रहा है। कल वंदना प्रकरण लिया। फ़िर अंतिम सार, रामनाम, हरिनाम, जगदंबा का नाम। यह सार है। तुलसीजी ने पूर्णांक में बहत्तर चौपाई और नौ दोहों में हरिनाम की वंदना की।

बंदऊ नाम राम रघुबर को।
हेतु कृसानु भानु हिम कर को।।

तुलसीजी कहते हैं, जो प्रणव का प्रतीक है; जो ॐकार रूप है; जो ब्रह्मा-विष्णु-महेशमय है; जो अग्नि, सूर्य और चंद्र का बीजक तत्त्व है, यही रामनाम है। शास्त्रीय चर्चा है। किसी की इन्कार करने की ताकत नहीं है। प्रमाण के साथ कहा है। है रामनाम, पर मैं इसे संकीर्ण करना नहीं चाहता। अतः हमारी जो परमनाम में श्रद्धा हो, वह सब रामनाम है। कृष्ण, शिव, जगदंबा, अल्लाह। तुलसीजी कहते हैं कि त्रेतायुग में रामजी ने जो लीला की वही कलियुग में है। हम ग्रामीण, खेती वाडी, जानवर पालना, खेत में मजदूरी करना; हम घंटों तक ध्यान में नहीं बैठ सकते और हम ऐसा कर भी नहीं सकते। यज्ञ भी नहीं कर सकते। तो हम क्या कर सकते हैं? नाम ले सकते हैं। नाम का आश्रय अद्‌भुत है। रामनाम महामंत्र है। गांधीजी सार्वजनिक रूप से तीन बार रामनाम बोले। एक बार उन्होंने काम करनेवाली बहनों को रामनाम दिया। दूसरा दक्षिण आफ्रिका में मारपीट के दौरान; आख़िर में गोली लगने पर। यों तो पूरी जिंदगी रटना चल रही थी। साहब, उनके जन्म दिन को 'विश्व अहिंसा दिन' घोषित किया है। रावण तो एक ही बार बोला। आह्वान के साथ 'कहां राम' बोला। नाभि में रामनाम सुरक्षित रखा था, क्योंकि भजन करनेवाले इसे प्रगट नहीं होने देते। रावण भी महात्मा है, महात्मा है, महात्मा है; जीवात्मा नहीं।

मानस-कागऋषि
:: ३ ::

रज से सूरज तक का पंथ काटे वही ऋषि-कवि है

'मानस-कागऋषि' के विषय में हम तात्त्विक-सात्त्विक चर्चा कर रहे हैं। पार्वती प्रश्न पूछती है, 'काग को यह पवित्र चरित्र कैसे मिला? काग तथा गरुड के बीच क्या संवाद हुआ?' 'मानस' के 'उत्तरकांड' में शिवजी ने भुशुंडि चरित्र विस्तार से कहा है। चार शिखर पर यह महात्मा साधना करते हैं। कैसे हैं ये पर्वत, आश्रम इसका वर्णन शिवजी करते हैं। परम रम्य कैलास पर जो विराजमान है, ऐसे महादेव नीलगिरि पर्वत और उस पर बिराजमान कागऋषि की साधना का वर्णन किया है।

भगतबापू की स्मृति में आयोजित यह कथा 'मानस-कागऋषि'; हमनें भगतबापू क्यों लिए हैं? लेने ही पड़े। बीसवीं सदी बीत गई; यह इक्कीसवीं सदी है। इस सदी का यह कागऋषि है। बहुत जिम्मेदारी से बोलता हूं। ऋषि के सात लक्षणों की चर्चा करनी है। ऋषि का एक लक्षण शास्त्रकार ने बताया है कि रजकण से अपवर्ग तक का वर्णन कर सके वह ऋषि कवि है।

एक रजकण सूरज थवाने शमणे...

कवि रज से सूरज तक का पंथ तय करता है। वह ऋषि-कवि है। आप भगतबापू को क्या समझते हैं? मैंने वर्षों पहले भगतबापू के लिए एक वाक्य कहा था। वसंतभाई ने भी क्वोट किया था। चौखट से अंबर तक का कवि है। पर आज मुझे दूसरा निवेदन करना है। मैं अपनी जिम्मेवारी से बोलूं और आप अपनी जिम्मेवारी से सुने। यह कागऋषि है, बाप! इनके खेत में बैठे हैं, बाप! उन्होंने कंकड़ से लेकर कैलास तक के गीत लिखे। कालिदास ने हिमालय के लिए लिखा है, 'हिमालयो नाम नगाधिराजः।' संस्कृत के कवि हृदय खोलकर जिसका वर्णन करता है, जिसे जगत का मानदंड कहते हैं। मानदंड कहा जाय ऐसा कैलास। यह मजादर का मर्द कंकड़ से कैलास तक पहुंचा है!

कुळ रावण तणो नाश कीधा पछी एक दि' रामने व्हेम आव्यो;
'मुज तणा नामथी पथ्थर तरता थया, आ बधो ढोंग कोणे चलाव्यो?'

- कागबापू

यह 'ढोंग' शब्द ये कवि ही प्रयुक्त कर सकता है! इसका भाषांतर नहीं हो सकता। कंकड़ का काव्य आप जानते हैं। बीच में आते विषय पर भी यह ऋषि-कवि लिखता जाय। यह कुछ भी छोटा पसंद नहीं करता था। मैं शिवरात्रि के मेले में कहता था, कवि कुछ कम चाहता ही नहीं है। वो अविनाशी की आरती करे। तो एक कल्पतरु का फूल भी रखता है। उसे कनेर के पुष्प भाते नहीं है, उसमें वह पृथ्वी की गंध छोड़ता है। ऋषि का दूसरा लक्षण, सब से प्रामाणिक डिस्टन्स रखे वह ऋषि-कवि। वह अपने सब्जेक्ट में भी आसक्त न हो। जिसे अपनी रचना से भी प्रामाणिक डिस्टन्स रखना है।

निज कबित केहि भाग न नीका।
सरस होउ अथवा अति फिका।।
जे पर भनीति सुनत हरषाहि।
ते नरबर थोरे जग माहि।।

तुलसी कहते हैं, अपनी कविता किसे अच्छी नहीं लगती? वह सरस हो या फ़ीकी? पर दूसरों की काव्य रचना सुनकर हर्षित हो वे तो बिरले ही होते हैं। एक असंगता, एक डिस्टन्स। मुझे एक बार हरीन्द्रभाई ने रेडियो इन्टरव्यू में प्रश्न पूछा था, जो सार्वजनिक हो गया था। उनका प्रश्न था कि कुछेक कहते हैं, 'हम बापू के बहुत क्लोज़ है।' मैंने कहा कि साधु को कोई क्लोज़ नहीं होता, कोई दूर नहीं होता। एक डिस्टन्स रहता है।

तीसरा लक्षण, ऋषि शगुन का प्रतीक है। कौआ अपशगुन नहीं करता। 'बेठी सगुन मनावती माता'; ऋषि-कवि शगुनपूर्ण होता है। उसके अपशगुन नहीं होते। कागबापू सुबह में निकलते होंगे तो उनके दर्शन से दिन सुधर जाता है। शगुनपूर्ण कवि कौन-कौन है, इसका मीठा झगडा है!

काव्यशास्त्र विनोदेन कालो गच्छति धीमतां।

शगुनमय कवि कालिदास, भवभूति, भारवि, आदि कवि वाल्मीकि, ऐसी चर्चा होती है। गांवों में पहले के जमाने में कौअे के शगुन और ताई स्मित करे वही शगुन होते थे। छोटी छिछली कड़ाही सब का पोषण करती है। ऋषि-कवि किसीका शोषण नहीं करता, पोषण करता है। यह कविता की प्रकृति है। छोटी कड़ाही खिलखिलाए तो कहते हैं कि मेहमान आयेंगे।

तारां आंगणियां पूछीने जो कोई आवे रे,
आवकारो मीठो आपजे रे जी...

बस, यह टिकना चाहिए। कई लोग पूछते हैं, इतनी बड़ी भोजन व्यवस्था क्यों? सिर्फ कथा नहीं हो सकती? ऐसे विचार 'उका' ही करते हैं! इस कागबापू के भंडारे में या किसी भी भंडारे में अनाज परोसा जाता है वह सिर्फ अनाज ही नही है। 'अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्।' साक्षात् ब्रह्म है। रोटी खाने इकठ्ठे नहीं होते। प्रारब्ध में रोटी तो सब लेकर आए हैं। यह तो ब्रह्मभोज हेतु इकठ्ठे हुए हैं। कई लोग कहते हैं कि बापू की कथा में सब खाने के लिए ही आते हैं! अरे, यह सब तो पचास-पचास को भोजन दे ऐसे हैं! और टी.वी. में वे दिखते हैं वे?

ऋषि का चौथा लक्षण; पक्षीसृष्टि में कौआ कभी पिंजरे में बंद नहीं होता। मैंने नहीं देखा। इसका अर्थ यह है कि कागऋषि पराधीन नहीं होता। राज्यसत्ता से पराधीन नहीं होता। धनसत्ता, प्रतिष्ठा की सत्ता, गुणगान गानेवाले की सत्ता से पराधीन न हो। पराधीन मुक्त हो यह कागऋषि का लक्षण है। पोपट को जैसा बुलाओ, अच्छा-बुरा बोलता है। कौआ तो 'कोऽहम् कोऽहम्', बोले; कौआ किसीको खोजता है। उसकी एक ही वाणी रहती है।

पांचवां लक्षण, कौआ परोपकार का प्रतीक है। कौए का एक लक्षण 'को' 'को' कर सब को इकठ्ठा करना। शंकर ने कागऋषि का लक्षण रखे ऐसे कागभुशुंडि के आश्रम का वर्णन किया है। शंकर कहे, 'हे पार्वती! तुम्हारे वियोग में मैं व्यग्रचित्त घूमता था। ध्यान में रुचि नहीं रही थी। कहीं पर शाता नहीं थी। समाधि में भी चैन नहीं था। फ़िर मैंने उत्तराखंड की ओर प्रयाण किया। देवी, एक नीलगिरि पर्वत है। रामभक्ति के रास्ते में परम प्रवीण ऐसे भुशुंडि का वह आश्रम। ज्ञानी ऐसे इच्छामृत्यु का वरदान प्राप्त ऐसे कागऋषि के आश्रम में पहुंचा। वहां चार शिखर है। चार प्रकार के वृक्षों के नीचे ये महापुरुष साधना करते हैं। कलियुग के लिए चार वृक्ष प्रासंगिक है।

तुलसीजी ने चार वृक्ष बताए साधना के लिए। एक आम, दूसरा बरगद, तीसरा पीपल और चौथा पीपर का है। कागऋषि ने पेड़ के नीचे बैठकर साधना की और इस कवि ने खेत के किनारे साधना की। कचरे के ढ़ेर के पास और बबूल के नीचे बैठकर साधना की।

पीपर तरु तर ध्यान सो धर।
जाप जग्य पाकरि तरु कर।।

पीपल वृक्ष के नीचे भुशुंडि ध्यान करते हैं। अन्य वृक्षों की अपेक्षा पीपल के पत्ते बहुत हिलते हैं। उसमें एक लय है, संगीत है। पीपल में एक महीन कंपन है। उस पर कोई अपने मन को स्थिर रखे उसका ध्यान सच्चा है। कागभुशुंडि ध्यान की चरमसीमा बताते हैं। पीपल विष्णु का वृक्ष हैं। गांव में कुछ नहीं करते है तो खेत में पीपल हो वहां बैलों को चारा डालकर घर से खाना आया हो वह खाते हैं। नींद न आये तो पीपल के नीचे दो मिनट हरिनाम ये काग-ऋषि की साधना मानी जायेगी। कागभुशुंडिजी जप करते हैं पीपर के नीचे और माला फ़ेरे तो भी पीपर के वृक्ष के नीचे। यूं तो कहीं भी माला फ़ेर सकते हैं।

आम के वृक्ष के नीचे भुशुंडिजी मानसिक पूजा करते हैं। स्थूल पूजा संभव ही नहीं थी अत: मानसिक पूजा करते हैं। शंकराचार्य और वल्लभाचार्य ने जगत को मानसी पूजा दी। वहां जलाशय है। वहां छोटे-बड़े विहंग रहते हैं। बरगद के नीचे एक छोटा-सा पथ्थर है। काली शिला है। उस पर कागभुशुंडिजी बिराजमान होते हैं। रोज पक्षीओं को रामकथा सुनाते हैं। हंस बैठे हैं। तब थोड़ा समय हंस का रूप लिया। आख़िर में महादेव बैठे। कैसे परम कैलासी वक्ता काग के पास कथा सुनने आए! गरुड बाद में गए। हम चाहे कितने बड़े हो पर जहां भगवान का चरित कथित होता हो, जगह मिले वहां बैठकर दो मिनट सुनियेगा। साहब, मेरा आज तक का अनुभव है, जहां कोई कथा, सत्संग या साहित्यिक सभा हो, मुझे तो कुछ न कुछ नया मिला ही है। जिसे अच्छा वक्ता बनना हो उसे अच्छा श्रोता बनना चाहिए। मैं तो काव्य-सम्मेलन, साहित्य-सम्मेलन को सत्संग ही मानता हूं। कभी भी ऐसा मत सोचिए कि कौअे से क्या सुने? सती को भी ऐसा ही लगा कि कुंभज से क्या कथा सुने? सती पूरा जीवन चुक गई! इसमें जात-पात नहीं देखते। हम साधुओं में ऐसी साखी है, 'कथा करे इ कागडो, भजन करे ए भूत।' साधु भी नहीं, बावा! साधु से भी ऊंचा शब्द 'बावा।' साधुओं में तो प्रकार होते हैं कि फलां संप्रदाय का साधु। बावा का कोई प्रकार ही नहीं, वह तो रूखड होता है।

रूखड बावा तुं हळवे हळवे हाल्य जो...

मेघाणी ने वेलाबावा पर लिखा। हरीन्द्रभाई ने भाष्य किए।

जेम झळुंबे नर ने माथे नार जो...

तुलसीजीने ज्ञान को नर कहा है। भक्ति नारी बताई है। भक्ति ज्ञान से ऊपर है। बिना भक्ति के ज्ञान शोभा नहीं देता, ज्यों बिना कर्णधार जहाज शोभा नहीं देता।

साधु के प्रकारों में विरक्त, वैष्णव, गृहस्थ, दशनामी साधु। बावा में ऐसा कुछ नहीं होता। साधु से ऊंचा शब्द 'बावा' है! 'जो डरे सो बावा नहीं', ऐसी व्याख्या मैंने दी है। जहां से शुभ मिले, श्रवण करना।

रचि महेस निज मानस राखा ।
पाई सुसमउ सिवा सन भाषा ।।

अनादि महादेव ने 'मानस' रचकर हृदय में रखी थी। ऐसे शंकर भी थोड़े समय तक हंस के रूप में कथा श्रवण हेतु जाते हैं। निजी अनुभव कहते हैं। 'अब देवी, गरूड ने मुनिओं को छोड़कर कागभुशुंडि के पास कथा क्यों सुनी ये आप को कहूं।'

राम-रावण का युद्ध हुआ उसमें रामजी नागपाश से बांध दिए गए। गुरु किसे कहे? जो अपने शिष्य को खुद से दुगुना दे वह गुरु है। अपनी सारी योग्य जानकारी योग्य अधिकारी शिष्य को दे वही गुरु है। उससे भी आगे अधिक देता है। यह रावण शंकर का शिष्य है। शंकर ने रावण को अधिकतम दिया। शंकर को पांच मुख, पंचानन; मैं पंचानन, ले, तू दशानन! मेरे दो हाथ; शून्य लगा ले मेरा आश्रित है, तुझे बीस हाथ देता हूं। तू बीस गुना सब को देना। शंकर कहते हैं, मेरे दो कान, तेरे बीस

कान। बराबर श्रवण करना। मेरी पंद्रह, तेरी बीस आंखें। शंकर ने रावण को अनेकगुना दिया है। अपने पास तो स्मशान, भस्म, विष। और रावण को बेहद दिया! गुरु वह है जो शिष्य से कुछ न ले और स्वयं से अधिकगुना दे। अनंत अनुभव, अभ्यास, अनंत दैवी संपदा गुरु अर्पण करते हैं। उनका ऋण कभी चुका नहीं सकते। गुरु देने के लिए ही आता है।

मूल बात थी, शंकर पार्वती के पास वर्णन करते हैं। राम-रावण का भीषण युद्ध चल रहा है। 'मानस' में बहुत लम्बा वर्णन है। रावण का तेज प्रभु में समा जाता है यह सब देख रहे हैं। शंकर स्वयं युद्ध में नहीं आते। पर नारद को प्रेरणा दी; रणरंग बढ़ाने मेरु राग बजाने को कहते हैं। 'मानस' में लिखा है, राग भी युद्ध छेडते हैं। आज के जैसे युद्ध नहीं थे कि गोले बरसाकर चले जाए! आमने-सामने युद्ध होते थे। शंकर कहे, मैं त्रिशूल रखूं और बैठे-बैठे मैं सब के शूल हर लूं। हे पार्वती, राम रणक्रीडा करते हैं। प्रभु मेघनाद के हाथों नागपाश से बंधे हैं। सन्नाटा छा गया! जिनके नाम से भवबंधन से छूटकारा मिल जाय उसे राक्षस ने बांध दिया! नारदजी ने गरुड से कहा, आप जाईए। भगवान लंका के मैदान में नागपाश के बंधन में है। उन्हें मुक्त कीजिए। देवी, गरुड गए। मुक्त किया। पर वहम के साथ लौटे। जिसके बारे में सुना था उनका नाम बोलने से भवबंधन कटते हैं वो हरि स्वयं बंध गए? जहां-तहां पूछने लगे। नारद ने भी कहा, इसमें मुझे भी सूझ नहीं है! ब्रह्माके पास गए। कहा, प्रभु स्ववश है वह कैसे बंध सकते हैं?

परबस जीव स्वबस भगवंता।
जीव अनेक एक श्रीकंता।।

ब्रह्मा ने कहा, पुत्र, जिस माया ने मुझे अनेक बार नचाया है वह माया तुझ में व्याप्त है। मैं इसका निर्णय नहीं कर सकता। पर गरुड, तू महादेव के पास जा। और देवी, गरूड मेरे पास आए। उस समय आप कैलास में थी। मैं कुबेर के यहां जाता था। रास्ते में मुझे गरुड मिले हैं। चित्त संदेह से व्याप्त है। मैंने कहा, 'गरुड आप मुझे रास्ते में मिले। दीर्घकाल के सत्संग से इस संदेह का नाश होता है। पर मैं नीलगिरि पर्वत पर निरंतर चल रही कथा में भेजता हूं। वहां कागभुशुंडि कथा कहते हैं। राजा का गर्व लेकर मत जाना। मैं हंस का रूप लेकर गया था और अंतिम पंक्ति में बैठा था। जहां जगह मिले बैठ जाना।' देवी, मैं उन्हें समझा पाता। पर एक तो वे रास्ते में मिले। दूसरा, एक पक्षी दूसरे पक्षी की भाषा अच्छी तरह से समझ सकते हैं। और मुझे कुबेर का काम भी था। देवी, कभी-कभी भगवान भक्त को पद का मद चढ़ता है तब कौतुक की रचना करते हैं। एक वस्तु, जीवन में संदेह उठे ही नहीं, इसका ध्यान रखना है। यदि जगे तो शीध्र ही समाधान प्राप्त करने हेतु यात्रा करनी चाहिए। एक बार

रजकण से अपवर्ग तक वर्णन कर सके वही ऋषि कवि है, ऐसा शास्त्रकार ने ऋषि का एक लक्षण बताया है। कवि रज से सूरज तक का पंथ पार करता है। उसे ऋषि-कवि कहते हैं। भगतबापू को आप क्या समझते हैं? मैंने बरसों पहले कहा था भगतबापू के लिए कि वे दहलीज से आकाश तक का कवि है। पर आज मुझे दूसरा निवेदन करना है; मैं बोलूं वह मेरी जिम्मेवारी और आप जो सुने वो आप की जिम्मेवारी। यह कागऋषि है। यह मजादर का मर्द कंकर से कैलास तक पहुंचा हुआ है। उसने कंकर से कैलास तक के गीत लिखे।

संदेह घर कर जाय तो 'गीता' में लिखा है, 'संशयात्मा विनश्यति।' इसका परिणाम हित-हानि ही है।

गरुडजी भुशुंडि के आश्रम से एक योजन दूर आते हैं। आठ मील दूर; गरुडजी वहां पहुंचे इससे पूर्व संशय खत्म होने लगे! गरुड पूछते हैं, कथा सुनने के बाद या आप के आश्रम के परिसर में प्रवेश होते ही मेरे संदेह नष्ट हो गए। मेरे संदेह क्यों नष्ट हो गए यह बताइए। साहब, यह जीवन का सत्य है। किसी बुद्धपुरुष के परिसर में,उसके नेट वर्क में आने पर भीतर कुछ होने लगता है। जैनधर्म में जो कहा गया है उसका स्वीकार होना ही चाहिए। महावीर जब निकलते तब चार कोस के वर्तुल में हिंसा रुक जाती थी। जगद्गुरु शंकराचार्य विचरण करते तब आसपास के पेड के पत्ते उपनिषद के मंत्र बोलने लगते थे। ब्रह्मसूत्र के श्लोक छोटे पौधों से निकलते थे। एक योजन तक कलि का प्रवेश नहीं था कागभुशुंडि के आश्रम तक। सभी पाप-ताप-संताप दूर रहते थे। ज्यों ही गरुड ने प्रवेश किया है, सभी संदेह मिटने लगे। पर गरुड गरुड है, शंकर नहीं है। थोड़ा पक्षीराजत्व बचा था।

यहां भुशुंडि मंगलाचरण की तैयारी कर रहे थे। देखते हैं कि हमारे कुल का मालिक आ रहा है। साधु की विनम्रता देखिए साहब! साधु की विनम्रता का गलत अर्थ न निकाले। वह आदमी खड़ा हो गया यह इसकी साधुता है। कालिदास के 'शाकुन्तल' के महर्षि कण्व राजा का सन्मान करने खड़ हुए यह साधु की नम्रता है कि राजा इश्वर का अंश है। मेरे यहां पधारे हैं अत: मुझे सन्मान करना चाहिए। भुशुंडि शिला की व्यासपीठ पर से खड़े हुए हैं और जो बोले हैं, तुलसी ने लिखा हैं-

नाथ कृतारथ भयउँ मैं तव दरसन खगराज ।
आयसु देहु सो करौं अब प्रभु आयहु केहि काज ।।

ध्यान रखिए; आप किसी मंदिर में बैठे हैं, पूजा करते हो और आप का गुरु आए तो शेष सामग्री गुरु की पूजा में लगाने को शास्त्र कहते हैं; देव को भूल जाए। कागभुशुंडि को यह पता है। गत जन्म का इतिहास याद है; मैं शिव उपासक विष्णु का निंदक, महाकाल के मंदिर में बैठा था। एक बार महाकाल के मंदिर में शिव का अभिषेक करता था उसी वक्त मेरे गुरु आए। मैंने अभिमान में खड़े होकर उनका सन्मान नहीं किया! मेरे गुरु कृपालु कुछ न बोले। पर महाकाल महादेव सहन न कर पाए। मंदिर पर आकाशवाणी होने लगी। रौद्र आवाज़ आने लगी। भुशुंडि कहते हैं, मुझे श्राप दिया, 'हे शठ, मैं तुझे दंड न दूं तो श्रुति मारग भ्रष्ट होगा। मुझ से भी जो बड़े गुरु हैं, तूने गुरु अपराध किया है।' कोई भी गुरु नहीं चाहता आप उनके पैर पकड़े। पर उनका अपराध न हो जाय इसका ध्यान रखिए। 'मानस' में लिखा हैं-

साधु अवग्या तुरत भवानी।
कर कल्याण अखिलक हानि।।

भुशुंडि कहे, फ़िर मेरे गुरु रो पड़े। महाकाल के मंदिर में गुरु ने 'रुद्राष्टक' गान किया। आप मेरे हैं अत: कहता हूं। मुझे मेरे दादा ने कहा था, स्नान करते समय 'रुद्राष्टक' गाना और संकेत किया कि स्नान करे तब यह मस्तक, हाथ नहीं है ऐसा विचार करना। बाकी शरीर का यह भाग वही शिवलिंग है। मस्तक नहीं का अर्थ अहंकार निकाल देना। बौद्धिकता एक और रख देनी। हाथ नहीं मानी कर्तव्य काट देना। स्नान करते समय जल का लोटा अपने शरीर पर डालकर मानो 'देवं भूत्वा देवं यजेत्।' ऐसा मुझे सिखाया गया था। आप को भी कहूं, 'रुद्राष्टक' सीखिए। मैं परचा-चमत्कार का आदमी नहीं। हररोज सूरज ऊगता है इससे ज्यादा क्या चमत्कार है? सुबह फूल खिलते हैं इससे ज्यादा चमत्कार क्या हो सकता है? खेत में बोए और झड़ी बरसे और दूसरे दिन अंकुर फूट निकले इससे ज्यादा चमत्कार क्या हो सकता है? परचे, धागे से समाज को बाहर निकलना चाहिए। यह समस्त जगत चमत्कारों से परिपूर्ण है। करने नहीं होते, बुद्धपुरुष के कदम ब कदम पर चमत्कार होने लगते हैं! यदि अहंकार और कतृत्व कटे तो देह ही देव है। युवापीढ़ी को कहता हूं, 'रुद्राष्टक' सीख लो तो स्नान के समय गाओ। 'रुद्राष्टक' 'रुद्राष्टक' है! यह बावा अपना अनुभव कहता है। सुबह उठकर 'रुद्राष्टक' का पाठ करना चाहिए। सोने से पहले 'हनुमान चालीसा' का पाठ करना। फिर देखिए मजा! कर्म के हिसाब भुगत लीजिए। भीतर प्रसन्नता रहेगी। शब्द तो देखिए-

करालं महाकालं कालं कृपालं।
गुणागार संसार पारं नतोऽहं।।
तुषाराद्रि संकाश गौरं गभीरं।
मनोभूत कोटि प्रभा श्री शरीरं।।

साहब, कविता तो देखिए! मनोभूत मानी कामदेव। मन में से उत्पन्न हुआ 'मनसीज', 'मनोज' करोडों कामदेवों की प्रभा और तेजस्विता लज्जित हो ऐसा महादेव का चरित्र है। एक वस्तु, शबद पर भरोसा हो तो देव तो बहुत है पर महादेव जैसा कोई नहीं। शक्ति जगदंबा जैसी कोई नहीं। महादेव, महादेव है। महादेवी महादेवी है। इसकी बरोबरी में कोई नहीं।

तुज शक्ति वामांगे स्थिता ह्री चंडिका अपराजिता
सहु वेद गाये संहिता नटराज राज नमोनमः।

-निनु मझुमदार

मैं काली बिंदी करता हूं। निम्बार्कीय परंपरा हमारी राधा-कृष्ण की उपासना। मैं राम को गाता हूं पर मानता हूं महादेव को। महादेव बारहमासी भगवान है।

कागभुशुंडि के अपराध से क्रोधित है शिव। उनके गुरु के 'रुद्राष्टक' से पिघला। कहा, 'माग, माग।' गुरु ने मांगा कि आप के प्रति हमारा भाव अखंड रहे। दूसरा वरदान यह कि यह मेरा शिष्य बालक है। उसने मेरा अपराध किया और त्रिभुवन गुरु आप ने क्रोध किया। उसके शाप का निवारण कीजिए। दंड देना है तो मुझे दीजिए। जलन मातरी कहते हैं-

कयामतनी राह एटले जोउं छुं,
के त्यां तो 'जलन' मारी मा पण हशे।

कयामत के दिन सब एक पंक्ति में खड़े रहेंगे तब मुझे डर नहीं लगेगा। क्योंकि तब वहां मेरी माँ भी होगी। फ़िर काल मेरा क्या कर लेगा? हम ऐसा नहीं कह सकते कि मेरा गुरु वहां होगा। हम उसे छोड़ दे पर वह हमें नहीं छोड़ता। अपनी भक्ति तो दो कौडी की! अपना मन चाहा न हो तो...! आप को कोई कहे कि मेरे गुरु रुठ गए हैं तो कहना, निकल जा यहां से! रुठे वो गुरु नहीं। रुठे क्यों?

शंकर ने कहा कि मैंने कह दिया अतः अयुत जन्म तो लेना ही पड़ेगा। पर जन्म-मरण त्वरित होगा। फ़िर पुनः एक नया जन्म होगा। गरुड को कहते-कहते भुशुंडि की आंखों में अश्रु है। कहते हैं, शंकर की कृपा से मैं नीलगिरि पर मौज करता हूं। रोज 'रामायण' गाता हूं। हंस-परमहंस सुनते हैं। मुझे इच्छित मृत्यु का वरदान है। पर मुझे मरना नहीं है। क्योंकि तन छूटे तो भजन नहीं होता, पर एक पीड़ा मुझे रहती है। एक पीड़ा मेरा पीछा नहीं छोड़ती। मेरे गुरु का अति कोमल स्वभाव; मैंने उनको ठेस पहुंचाई! अब ऐसी भूल नहीं करूंगा। मेरे पक्षी समाज का इश्वर आया है। मुझे सन्मान करना चाहिए। भुशुंडि खड़े हो गए हैं, 'मैं कृतार्थ हुआ हूं। आज्ञा कीजिए। कैसे आना हुआ?' अब गरुड का जवाब देखिए। एक योजन अंदर आने से कचरा निकल गया। अभी तो पहली मुलाकात। अभी तो आंख से आंख मिली है और प्रतिभाव? 'हे भुशुंडि, हे कागऋषि, आप तो सदा कृतार्थरूप है। जिसकी स्तुति शंकर ने की वो आप है। शंकर ने मुझे कहा कि तू वहां जा। तेरे संदेह दूर होंगे। मैं जिस कारण से आया था, आप के दर्शन होते पूरा हुआ।'

देखि परम पावन तव आश्रम।
गयउ मोह संसय नाना भ्रम।।
अब श्री राम कथा अति पावनि।
सदा सुखद दुख पुंज नसावनि।।

'हे भुशुंडि! आप के परम पवित्र आश्रम के दर्शन होते ही मेरे अनेक प्रकार के भ्रम, मोह, संशय नष्ट हो गए। अब मुझे अति पावनी ऐसी रामकथा सुनाईए। मैं बार-बार बिनती करता हूं।' गरुड भूखा हुआ हैं। भूख लगी है। गरुड की विनीत, सरल, सुखद, सप्रेम वाणी सुनकर भुशुंडि के मन में हर्ष हुआ। कथा आरंभ की। हे भवानी! मैंने आप को जो कथा सुनाई वह पूरी कथा भुशुंडि ने कही। कथा सुनकर गरुड बोले, 'मेरे सभी संदेह दूर हो गए।' भुशुंडि बोले, 'महाराज, मुझे ज्यादा गाने का मौका देना था अतः प्रभु को आप में मोह जाग्रत हुआ, बाकी आप जैसे श्रोता को मोह न हो। फिर भुशुंडि ने पूछा, महाराज, और कुछ सुनना है? तब कहा कि इतनी सारी बुद्धता आप में है फ़िर भी कौअे का शरीर क्यों मिला? पूरी बात कीजिए। यह 'रामचरित मानस'रूपी प्रेमशास्त्र आप को कहां से प्राप्त हुआ यह बताइए। भुशुंडि 'रामायण' कहां से मिली और कौअे का शरीर कैसे मिला यह कहते हैं।

मानस-कागऋषि
:: ४ ::

कागबापू की रेन्ज मजादर से मानसरोवर तक है

'मानस-कागऋषि'; हररोज प्रश्न आते हैं। भिन्न-भिन्न जिज्ञासाएं आती है। पर आनंद है कि गांव के आदमी का एक भी प्रश्न नहीं है! मुझे लगता है, शहर के बौद्धिक प्रश्न लेकर जन्मते हैं! गांव के लोग मन से समाधान लेकर जनम लेते हैं। प्रश्न जिज्ञासा के रूप में है।

प्रश्नो घणा विकट छे.
रस्तो छता निकट छे.

हम कागबापू की तरह किसी मुक्तानंद के पास पहुंच जाय; जगदंबा के पास पहुंच जाय; तो पंथ थोड़ा-सा है। बाकी तो प्रश्न ही प्रश्न है! कविओं को भी प्रश्न होते हैं। पर ये कल्पन, ईश्वरदत्त जिज्ञासाओं में से काव्य स्फुरणा होती है। मुझे कागबापू परिवार का सदस्य बाबुभाई का पुत्र कह गया कि भगतबापू ने यह कविता इस खेत में बैठकर लिखी थी। आईए मैदान में, सुनाऊं-

धरणी तणो पिंडो कर्यो, रज लावतो क्यांथी हशे?

यही प्रश्नोपनिषद है, पर कवि का प्रश्न है। 'अथातो ब्रह्मजिज्ञासा' या 'अथातो भक्तिजिज्ञासा' है; 'अथातो धर्मजिज्ञासा' है। भगतबापू तो कविता के नीचे स्थान का नाम लिखते थे-

धरणी तणो पिंडो कर्यो, रज लावतो क्यांथी हशे?
जग-चाक फेरणहार हा, ए कुंभार बेठो क्यां हशे?

इसीलिए मैंने कहा कि यह रज से सूरज तक का कवि है। 'कोऽहम् कोऽहम्' काग के मुख का 'को...को' है।

छेतरे नहीं छेतराय ना, अबजोनो आडतियो दीसे,
सौना हिसाबो चूकवे ए, शेठियो केवो हशे?

कवि ठेठ कहां पहुंचता है? यह काग-उपनिषद है।

आकाशना घडनारनां घरने घड्यां कोणे हशे?
आकाशनी माता तणा कोठा कहो केवडा हशे?

यह एक ही क्षेत्र का कवि नहीं, खेत का कवि है। एक-एक खेत जोते। बरसों से जो खेत उज्जड़ थे उसमें जुताई कर डाली! क्षार जमीन में कुछ पैदा नहीं होता था वहीं खेती कर डाली, साहब! बरकत वीराणी याद आते हैं-

'बेफाम' तो ये केटलुं थाकी जवुं पड्युं?
नहीं तो जीवननो मार्ग छे घरथी कबर सुधी।

तो-

प्रश्नो घणां विकट छे, रस्तो छतां निकट छे.
देखाय छे ए मंच पर, नाटक वगरनो नट छे।

-अंकित त्रिवेदी

मंच पर दिखता है पर नाटक नहीं करता! बिना नाटक का नट है। बिना नेटवर्क का नट है। बिना योजना का नट है। प्रयासशून्य प्रासादिक नट है।

यह शरीर पंचमहाभूत का है, ऐसा शास्त्र भी कहते हैं। विज्ञान भी सिद्ध करता है। कौअे का शरीर भी पंचमहाभूत का ही होगा। पर यहां देह की बात नहीं है। कागभुशुंडि के ऋषि देह में काग है, भीतरी हंस है। तुलसीजी ने कौअे के अवगुण भी बताये हैं।

बायस पालिहहिं अति अनुरागा।
कबहु निरामिष होहिं कि कागा।।

एक सुभाषित में भी कहा गया है-

काकस्य गात्रं यदि कांचनस्य
माणिक्य रत्नं यदि चंचुदेशे
एकैकपक्षे ग्रथितं मणिनां
तथापि काको न तु राजहंसः।

कौअे के शरीर को सोने से मढ़ दो और उसकी चोंच पर माणिक लगा दीजिए; उसके एक-एक पंख को मणि से जड़ दो, तो भी कौआ राजहंस नहीं हो सकता। तुलसी कहते हैं कि कितने प्रेम से कौअे को पालिए वह कूड़े कर्कट में चोंच मारता ही है। मेरा कागभुशुंडि स्वयं कहता है, हे गरूड, मैं हर तरह से अधम पक्षी हूं। यह बुद्धपुरुष बोला है। पर मेरे प्रभु की कृपा से गुरु लोमश की छाया में पहुंच गया। परमात्मा ने मुझे जगतपूज्य बना दिया। ऊपरी रूप मत देखिए, भीतर झांकिए। भगतबापू को देखकर लगता ही नहीं कि यह काग है! काग अटक है। इसीलिए मैं उन्हें कागऋषि कहता हूं। अपनी चोंच अखाध में नहीं जानी चाहिए। न पीने के पदार्थ में जानी चाहिए। मैं साधु हूं। यहां बैठने के बाद किसी का नहीं रखूंगा सिवा मेरे गुरु के। डरे वो बावा नहीं, बाप! मैं हृदय से कहता हूं। इस जीभ की इज्जत करता हूं। आप की जीभ से कितना महीन निकलता है! यह जीभ कहीं और न जाय। 'रामायण' में एक शब्द है; नारदजी को गाली दी है-

पर घर घालक लाज न भीरा।
बांझ की जान प्रसव की पीरा।।

और गाली देनेवाले उच्च घराने के थे! मकान ऊंचे थे पर पगथार ऊंचे नहीं थे। मेरे गांव में झौंपडी जैसा हो न तो भी पडथार ऊंचा होता है। ऐसे तत्त्वों ने नारद को गाली दी है! ये भगतबापू थे तब भी क्या उन्हें कम गालियां दी थी? पूरी दुनिया जानती है; तो उसमें हम नहीं जायेंगे। उनकी निंदा को लेकर कविता और दोहें लिखे गए! कर्तव्यहनन तक पहुंचा समाज। उस समय के अखबार टूट पड़े! मैं छोटा था तब पढ़ता था। मुझे यह नहीं कहना है। मेरी यह पीठ नहीं है। मेरी पीठ मोती चुनने की है। साहब, उनके समय में हम ने किसी भी महापुरुष को छोड़ा नहीं है! इस दाढ़ी ने बहुत सहन किया! तुलसी पूछते हैं, काग कभी निरामिष हो सकता है? इसने अपनी चोंच कहीं बिगाडी नहीं। यह 'पर घर घालक' नहीं था। नारद को गाली मिली पर इसे नहीं दे सकते। यह तो 'पर घर पालक' है। कागबापू का ही दोहा कहूं-

पोता सौ पोता तणां पाळे पंखीडां,
पण बचडां बीजाना को'क ज सेवे कागडा।

'रामचरित मानस' पक्षीओं का मेला है। ऐसे पंखी कि भगतबापू कहते थे, 'ऊडी जाओ पंखी पांखुवाळा।' बरगद ने कहा, 'भागो।' बरगद मानी विश्वास।

वडलो कहे छे, वनरायुं सळगी,
मूकी दियो जूना माळा,
ऊडी जाओ पंखी! पांखुंवाळा...

मुझे लगता है, भगतबापूरूपी वटवृक्ष के नीड में हम सब इकठ्ठे हुए हैं। यहां चाहे ऐसी अगनजाल फैले तो भी कोई उड़े ऐसे नहीं है। संकल्प करके घर जाना, 'भेळां बळशुं, भेळां भरशुं उचाळा।' यह तो वेद ध्वनि है, 'सं गच्छध्वं।'ब्रह्म की सवारी हंस है। इस हंस का विचार काग में आया। शरीर काग का, आत्मा हंस की है। उपनिषद में आत्मा को क्या कहा? हंस; हमारे यहां गान हुआ, 'मारो हंसलो नानो ने देवळ जूनुं तो थयुं।'

यह 'रामचरित मानस' पक्षीओं का मेला है। हम तो पंखवालें, आंखोंवालें। हमारे पास चोंच है, यद्यपि मोती चुग सके तो! 'मानस' के अलग-अलग चार पक्षी उपनिषद के अलग-अलग संदर्भ में बोलते हैं। साहब, यह तो 'मानस' है। मोरारिबापू कुबूल करते हैं कि मैंने जब गाने का शुरू किया तब आसान लगता था। अब जब-जब गुरुकृपा से भीतर तक जाता हूं, मुझे उतना ही कठिन लगता है कि यह शास्त्र अद्‌भुत है! भगतबापू ने यूं ही नहीं पकड़ा होगा! भगतबापू का पंच महाभूतों का शरीर था, पर पांच निष्ठा का भी था जो कागभुशुंडि में है। यह जोड़ता हूं सोच समझके कहता हूं।

पांच निष्ठा गिनाउं। एक रामनिष्ठा तो भुशुंडि की है ही। गुरु ने राममंत्र और 'रामचरित मानस' दिया था। महर्षि लोमश को 'रामचरित मानस' सीधे शंकरजी से मिला था। शंकर ने कुछेक प्रत ही रखी थी। कुछेक निष्ठावान को ही दी थी। एक प्रत 'सो सिव काकभुसुंडिहि दिन्हा।' दूसरी प्रत याज्ञवल्क्यजी के पास आई। तीसरी प्रत अपने पास रखी। चौथी राजापुर तुलसीदासजी के पास गई और आपको बुरा न लगे तो कहूं, पांचवीं तलगाजरडा आई। हमें मिली इसका आनंद है। बाकी तो हर घर एक-एक प्रत है। भुशुंडि को गुरु द्वारा रामनिष्ठा, राममंत्र और 'रामचरित मानस' मिला। दूसरी निष्ठा कृष्णनिष्ठा। कुछेक निष्ठाएं गोपनीय होती है। अतः संक्षेप में वे कृष्ण चरित्र गाते हैं।

जब जदुबंस कृष्न अवतारा।
होइहि हरन महा महि भारा।।

अच्छा हुआ कि तुलसी ने 'रामचरित मानस' में ज्यादा कृष्ण चरित्र नहीं लिखा। नहीं तो मैं बोल ही न पाता! कृष्ण आए और मेरी जबान बंद हो जाय! यह मानुष गया उसे पांच हजार वर्ष हुए। मार डाला! जीने नहीं दिया! नरसिंह की हूंडी स्वीकारी होगी। नेग पूरे किए होंगे। हमें न तो मनीओर्डर किया है! कृष्ण ने हमें क्या दिया? फ़िर भी पांच हजार वर्ष पीछे जाकर नाम लेते हैं! मेरे भुशुंडि की कृष्णनिष्ठा दो पंक्तिओं में है। यह कृष्ण मुझे गाने न देता! अच्छा हुआ 'मानस' में उनका चरित्र नहीं है। मैं गा न पाता! रामकथा गाने की महेच्छा वैसी ही रह जाती! कृष्ण कृष्ण है। धन्य है सौराष्ट्र भूमि। कृष्ण के जाने के बाद कुछेक कौम अभी भी काले कपड़े उतारती नहीं है! हम रंग क्यों बदले? अभी तक शोक किसीने उतारा नहीं है! साहब, यह भूमि अद्‌भुत है! साहब, हमें पीठुबापू कहते थे आप कृष्ण का 'ण' कहते थे, रावण का 'ण', कर्ण का 'ण', किसी का नहीं, वैसे चारण में भी 'ण' है। चारण किसी का नहीं। जो किसीका नहीं होता वह सब का होता है। चारण राजा का? नहीं। पैसेवालों का? नहीं। पदवाले का? नहीं। मुझे अच्छा लगा। चारण भी किसीका नहीं। ब्राह्मण भी किसीका नहीं। इस देश का आचार्य भी किसीका नहीं। सब के साथ प्रामाणिक डिस्टन्स होना चाहिए।

मधुसूदन सरस्वती को याद कर तलगाजरडा का बावा मांगता है यदि पक्कता आ गई हो तो! मांग इतनी

ही कि सभी कार्य पूरे होने पर समय मिले तब हरि को याद कर लेना। कृष्ण नहीं तो जगदंबा को याद कर लेना, बाप! मेरा राम कौन है? माँ ही है। तुलसी ने लिखा है 'उत्तरकांड' में, भुशुंडि बोला-

दुर्गा कोटि अमित अरि मर्दन।

राम करोडो-करोडो दुर्गा है। 'रामायण' जगदंबा है, जोगमाया है।

रामकथा कालिका कराला।

राम की कृपा कालिका है। भगवती गंगा कालिका है। बस, दो मिनट के लिए उन्हें पुकारिए। यह नहीं कि चौबीस घंटे जाप कीजिए। जिसमें श्रद्धा हो उन्हें पुकारिए। हरीन्द्र दवे लिखते हैं-

फूल कहे भमराने, भमरो वात वहे गुंजनमां;
माधव क्यांय नथी, मधुवनमां।
शिर पर गोरसमटुकी, मारी वाट न केमे खूटी,
अब लग कंकर एक न लाग्यो, भाग्य गयां मुज फूटी।

कवि कहां तक गाता है! उस समय कृष्ण कंकड मारता था तब मटके टूटते थे, भाग्य वैसे ही रहते थे। कृष्ण के जाने के बाद मटके वैसे ही रहे, भाग्य फूट गए!

भुशुंडिजी की तीसरी निष्ठा, महादेवनिष्ठा। 'मानस' में जिस तरह वे शिव को लाते हैं, उनकी निष्ठा का परिचय है। एक बात स्पष्ट कर दूं? विशुद्ध परिचय हो वही परचा है। और क्या? किसीका विशुद्ध परिचय हो जाय कि यह आरपार है। इस खेत में इतने आदमी इकठ्ठे हो यह क्या है? यहां आकर देखे तो पता चले! यह परचा या चमत्कार नहीं है। यह पंखी का मेला है कि वटवृक्ष जले तो भी कोई जाने के लिए तैयार नहीं है! मुझे कहने दीजिए, जिस आदमी को राम में करोड़ो-करोड़ो दुर्गा दिखे उसकी शक्तिनिष्ठा कैसी होगी? भुशुंडि की चौथी निष्ठा शक्तिनिष्ठा और आख़िर में गुरुनिष्ठा।

एक सूल मोहि बिसर न काउ।
गुरु कर कोमल सील सुभाउ।।

काग का शरीर पंच महाभूत का ही तो है। आश्रित का शरीर पंच महाभूत का ही होता है। पर भीतर पांच निष्ठा का बना हुआ होता है। इसीसे कागबापू की सरनेम 'काग' है। उनमें पांच निष्ठा दिखाई देती है। इसमें अभक्ष्य भोजन नीति नहीं है। जहां-तहां चोंच घूसेड़ने की वृत्ति नहीं है, अधमता नहीं है। मैं कागबापू का बारोट नहीं हूं! पर बाबुभाई, तेरे दादा में पांच निष्ठा है। पूरा चारण समाज गौरव लेता है। उनकी रामनिष्ठा; उनकी 'मानस'निष्ठा; उनके रामपरक पद। मुझे इनके प्रमाण देने की जरूरत नहीं है। आप की जीभ पर पूरी कागवाणी हैं। और कृष्ण निष्ठा। कृष्ण की 'महाभारत' की उनकी रचना। किसने ऐसा काम किया है? व्यासजी की आत्मा तृप्त हो ऐसा काम इन्होंने किया है!

जन्मीओ जगतमां 'काग' हुं ज्यारथी,
त्यारथी कृष्णनो तार लाग्यो।

जब से मैंने जन्म लिया तब से कृष्ण को लेकर आया हूं। यह कागबापू की कृष्णनिष्ठा है। जनम लिया तब से लगनी लगी है। तीसरी शिवनिष्ठा। वहां टीले पर सावन का पूरा महिना! इसीलिए मैंने कहा, यह कंकड से कैलास तक का कवि है। साहब, रेन्ज तो देखिए! मजादर से मानसरोवर। कल्पना तो कीजिए! लम्बा पंथ कैसे काटा है! चौथी गुरुनिष्ठा; गुरु मुक्तानंद; अभी भी उस निष्ठा का निर्वाह हो रहा है। पांचवी निष्ठा जगदंबा की निष्ठा। उन्होंने जहां-जहां जगदंबा का दर्शन किया। एक पंक्ति गाऊं। पूरी नहीं आती। हा, सुनता बहुत हूं। श्रोता का अवोर्ड मिले तो मुझे मिले। मैं लूंगा नहीं! एक उर्दू का शे'र कहूं-

कभी कभी वो मुझको ऐसी रसाई देता है।
वो सोचता भी है तो मुझको सुनाई देता है।।

कैलास पर बैठा-बैठा कुछ विचार करे तो तलगाजरडा में सुनाई देता है! विंध्याचल में माँ विचार करती है तो मजादर में सुनाई देता है! मुझे उनकी यह पंक्ति अच्छी लगती है-

मारा चारणोना भाग्यमां होय गमे तेटला गुना,
हुं एकलो भोगवुं, सौने छोडी मेलजे अंबा।

ऐसा ही सोनलमाँ के लिए गाया है-

सोनलमा, आभ कपाळी...भजां तने भेळियावाळी;
ए...रज ऊडीने आखो आभ ढंकायो,
हजी डाडो सूरज पूरे छे साख...

कागबापू में रामनिष्ठा, कृष्णनिष्ठा, शिवनिष्ठा, शक्तिनिष्ठा, गुरुनिष्ठा यह पंचनिष्ठा का समन्वय है। पांच-पांच निष्ठा का यह युगदल है। काग में रहा हंस पांच निष्ठा का परिणाम है। इसलिए उपनिषद में आत्मा को हंस कहा है। 'मानस' में पक्षीओं का मेला है। वे अपने-अपने ढ़ंग से उपनिषद का यह महावाक्य बोलता है। उपनिषद में चार महा वाक्य 'अहं ब्रह्मास्मि।', 'तत्त्वमसि।', 'प्रज्ञानं ब्रह्म।', 'अयमात्मा ब्रह्म।' यह महावाक्य पर उपनिषद जगत को प्रेरणा देता है। ओशो ने भी कहा था कि इतनी ऊंचाई पर से विश्व के किसी भी चिंतक ने विचार प्रस्तुत नहीं किए हैं, जो उपनिषद ने किए। इसके ऊपर कोई जा सका नहीं! और कोई जा भी न सके! एवरेस्ट पर से कहां जाना? 'मानस' में वह अपने ढ़ंग से आता है। वह प्रेमधारा का ग्रंथ है। इसीलिए तलगाजरडुं रामकथा को प्रेमयज्ञ कहता है, ज्ञानयज्ञ नहीं।

गरुड के प्रश्नों के जवाब में भुशुंडिजी कहते हैं, मुझे लोमश ऋषि ने शाप दिया। पर मुझे विश्वास था अत: शाप को भी आशीर्वाद समझ मैंने काग का शरीर धारण किया। देह कौअे का, भीतर हंस का। जरा भी विरोध नहीं, धन्य है। भरोसे के मार्ग पर चलनेवालों के लिए 'रामायण' शक्तिदायी है। गरुड ने पूछा, आप को कौए का शरीर मिला, पीड़ा नहीं हुई? तब काग ने कहा कि गुरु हमारी समझ से बाहर है। वह क्रोध करे तो उसमें भी कल्याण ही होता है। भुशुंडि ने कहा कि गुरु ने बहुत उपकार किया। यदि मैं आदमी होता तो पैर लेकर कब अयोध्या पहुंच पाता? बहुत दूर नगरी! और पांव से गया होता तो मुझे राज भवन में कौन आने देता? कौआ हुआ तो उड़कर आंगन में पहुंच जाऊं! मुझे रामजी की जूठन मिले, काफ़ी है। मुझे तो गुरु ने राम का घर दे दिया!

तो, 'काग' भगतबापू की सरनेम है। काग के अपलक्षण इनमें नहीं है, पर भीतर हंस है। उपनिषद आत्मा को हंस कहता है। तो इस कागऋषि ने पांचवां उपनिषदीय वाक्य दिया, 'सोहमस्मि इति वृत्ति अखंडा।' ज्यों कागभुशुंडि पांच निष्ठा का पिंड है यों भगतबापू भी पांच निष्ठा का पिंड है। एक रामनिष्ठा; दूसरी कृष्णनिष्ठा;

काग का शरीर तो पंचमहाभूत का ही है। आश्रित का शरीर पंचमहाभूत का ही बना होता है पर भीतर पांच निष्ठा का बना है। इसीलिए कागबापू की सरनेम 'काग' है, पर मेरी दृष्टि से मेरी जिम्मेवारी से कहता हूं तो उसमें पांच निष्ठा दिखती है। एक उनकी रामनिष्ठा, 'मानस'निष्ठा, रामपरक के उनके पद। दूसरी निष्ठा, कागबापू की कृष्णनिष्ठा। कहते हैं, जनम से लगनी लगी थी। तीसरी शिवनिष्ठा; वहां छोटी पहाड़ी पर पूरा सावन का महीना। चौथी गुरुनिष्ठा; गुरु मुक्तानंद। और अभी भी उस निष्ठा का निर्वाह होता है। पांचवीं जगदंबा की निष्ठा। उन्होंने जगदंबा का दर्शन जहां-जहां किया ये। उन पांच निष्ठाओं का यह युगदल है।

तीसरी शिवनिष्ठा; चौथी भगवती निष्ठा; पांचवीं निज गुरु मुक्तानंदजी के प्रति निष्ठा। इन पांचों निष्ठा ने दाढीवाला रूप धारण किया है, यह कागबापू है। उनके आंगन में कथा आयोजित हुई है। उन्होंने इन सभी निष्ठा पर भजन लिखे हैं।

वाग्या छे वधायुंना पावा, नंदबावा तारा नेहमां,
गंधर्वो आज आव्यां छे गावा, नंदबावा,
जेनी मोहजाळमां आखी दुनिया वींटाणी,
एनी काया आज तारी दोरडीए बंधाणी।

तुलसी कहते हैं, रामभद्र छोटे थे तब चार पांव से चलते थे। राजमहल के प्रांगण में फ़िर दीवार पकड़कर खड़े हुए, चलने लगे। मणिजड़ित दीवारें थी। परमहंस भिक्षा लेने के बहाने जाते थे। भुशुंडि भी परमहंस थे। कौशल्या कहे, आप का चेहरा देखकर लगता नहीं कि आप भिक्षा मागो ऐसे साधु हो! तब कहते हैं कि भिक्षा तो बहाना है। हम तुम्हारे पुत्र के दर्शन काज आते हैं। हम परमहंस बने इससे तो अच्छा था कि तुम्हारी दीवार के परमहंस बने होते तो यह राम हाथ से स्पर्श करते हैं तो हमें भी हाथ का स्पर्श होता। यही भाव कागबापू में आया-

काग, तारा फळियामां फरे अडवाणो!
एजी, तारा पगथिये सर्जाणो नहीं, हुं तो पाणो!

उपेन्द्र त्रिवेदी 'अस्मिता पर्व' में आए तब कहते थे कि ये धूलि के कवि, लोकसाहित्य के कविओं की कविताओं को शिष्ट साहित्य वाले दूर रखते हैं! बापू, कई लोगों को धूल की एलर्जी होती है! मैंने कहा, साधु! लोकसाहित्य चाहे शिष्ट साहित्य न हो पर वह अपने-अपने इष्ट का साहित्य होता है। शिष्ट साहित्य तो पूछे, आप क्या लेंगे? हमें बोलने ही न दे! और लोकसाहित्य?

'काग' एने पाणी पाजे, साथे बेसी खाजे रे,
ऐने झांपा रे सुधी तुं मेलवा जाजे रे,
आवकारो मीठो आपजे रे जी।

यह बावा चिमटावाला नहीं, चुटकीवाला है! ऋषि मंत्रदृष्टा होता है! पर कवि-ऋषि हो वह सूत्रदृष्टा होता है। कैसा सूत्रपात?

मानवीनी पासे कोई मानवी न आवे रे,
तारा दिवसनी पासे दु:खिया आवे रे...

आज तेरे घर दिन ऊगा है इसलिए आते हैं, इसमें काटने को क्यों दौडता है? लड़के को ब्याहता है और ढ़ोली पर नाराज होता है? समधी से गले मिले तो पुलिस बुलानी पड़े! जिस दिन ब्याह तय हुआ तब से यह ढ़ोली तेरे मुहल्ले में ढ़ोल बजाता है थोड़े से गुड़ के लिए! अधिक अतिथि घर आए तो समझना कि अच्छा दिन है। उस दिन जो कमरे बंद रखते हैं और दिन के मालिक सूर्य को पता चलता है कि मैं आऊं वह नापसंद है तो जा, रातें मुबारक तुम्हें!

लोकसाहित्य चाहे शिष्ट साहित्य न हो, पर इष्ट साहित्य है। वह उपासना और अनुष्ठान का साहित्य है। एक अगरबत्ती कर गाये तो जगदंबा को हकार की आवाज़ देनी पड़े! कल हरेशदान गाता था। मुझे समांतररूप से शास्त्र के श्लोक याद आने लगते थे। सांख्य, योग, न्याय के श्लोक की चिनगारियां झड़ने लगे क्योंकि गुरुकृपा से भीतर भरा है। ये सब लोककवि में कहां से आया? डेम को भरना पड़े, कूएं स्वयंभू फूटते हैं। व्यासपीठ पर से कहता हूं, यह साहित्य उपासना और अनुष्ठान का साहित्य है। कोरे मंच का साहित्य नहीं है। यह तो जगदंबा के पास धूप करके बोलने का साहित्य है। मंच पर अपना जादू बिखरे इसमें तो सवाल ही नहीं है! इसका एकाद टुकड़ा लेकर बैठ जाय तो उसे स्वीकृति की पुकार मिले। पर जिसे धूल की एलर्जी है तो क्या करें?

बाप, कागबापू के आंगन में सब इकठ्ठे हुए हैं। दो किनारों में सब है! यह पंखीमेले का वटवृक्ष है। भगवान करे, इस वटवृक्ष को आग न लगे। भगतबापू को कहना न पड़े कि 'ऊडी जाजो'; आख़िर में उन्होंने कहा वैसे ही रहे, 'भेळा भरशुं उचाळा।'

मानस-कागऋषि
:: ७ ::

भगतबापू का भीतरी मारग भक्ति का था

पार्वती शंकर को पूछती है, प्रभु का पवित्र चरित्र काग को कहां से मिला? गरुड और कागभुशुंडिजी दोनों हरिभक्त है। दोनों के बीच क्या संवाद हुआ? ऋषि के पास चार वस्तु होती है। वो हमारे कागबापू के पास भी थी। हम किसे ऋषि कहे? ऋषि के कौन-से लक्षण? बहुत सारे लक्षण गुरुकृपा से शास्त्रों के आधार, अनुभव के आधार, अंत:करण प्रवृत्ति के आधार पर कह सकते हैं। ऋषि मंत्रदृष्टा होता है। ऋषि और मुनि पर्यायवाची है। पर यह तो शब्दों का खेत है। समान अर्थ में प्रयुक्त होने के बावजूद अलग-अलग संदर्भ में अर्थ बदलते हैं।

ऋषि हंमेशा गृहस्थ रहा है। ऋषि हंमेशा त्यागी और विरक्त रहा है। वहां मुनि भी गृहस्थ दिखते हैं। उपनिषदकाल में जाय तो ऋषियों को एक से ज्यादा पत्नियां थी। एक ऐसा याज्ञवल्क्य नाम जिन्हें मेरा तुलसी प्रणाम करते कहते हैं, 'परमविवेकी।' जिनके पास दृगविवेक है, वाक्विवेक है, श्राव्यविवेक है, चरणविवेक है और हस्तविवेक है। यह पांच-पांच विवेक का सम्राट है। जब उन्हें शास्त्रार्थ के लिए निमंत्रित करते थे। जो शास्त्रार्थ जीते उन्हें सुवर्णजडित सींगवाली एक लाख गाय मिलती थी तब वे पहले से ही शिष्यों को कहते थे, व्यवस्था कर रखो गायों को रखने की; हम ही जीतेंगे। गुरुकृपा से उन्हें अपनी विद्या पर इतना विश्वास था। वह अहंकार नहीं, विश्वास था जो मारता नहीं पार लगा देता हैं। और यह कृषि कवि बोला है कि गर्व किसे-किसे तोड़ डालता है?

तो, याज्ञवल्क्य ऋषि गृहस्थ है। प्राय: ऋषि पंचकेश में होते हैं। मुनि का मुंडन होता है। इसे सिद्धांत मत मानिए। मुनि-परंपरा में आपको भद्ररूप मिलेगा। ऋषि को लोककल्याण कार्य हेतु समय का अभाव रहता था। इसी से वे दाढ़ी-बाल रखते थे। वे अपने जीवन की प्रत्येक क्षण लोकमंगल कार्य में बिताते थे। अपने शरीर निर्वाह के लिए उनके पास समय नहीं था। प्राय: ऋषि श्वेत वस्त्रधारी दिखाई देता है। प्राय: ऋषि श्रमिक होते थे। ऋषियों ने खेत खेड़े हैं। ऋषि परिश्रमशील थे। कणाद, पिपलाद का स्मरण कीजिए। सबको कागबास डालें। अत: ऋषि और मुनि की

पहचान का फ़र्क बता सके, बाकी कोई भेद नहीं है। यह कागऋषि दाढ़ीवाला गृहस्थ कवि है। मुझे अमुक दाढियां पसंद है। मैं उनका चरणस्पर्श करूं। एक तो भावनगर के साधुचरित दीवान सर प्रभाशंकर पट्टणी। वह भी सर्जक, एक यह अपना काग, दाढीवाला। फिर उन्होंने ही खड़ा किया एक और दाढीवाला बावा! उन्होंने शंकर को दाढीवाला बावा कहा! नोबेल प्राइज़ विनर वैश्विक कवि रवीन्द्रनाथ टागोर की दाढी। कागबापू की, पट्टणी साहब की, रजनीश की दाढी। सत्य तो जहां से मिले ले लीजिए। हमें पूरा मोल खरीदने की जरूरत नहीं है! मेरी निजता है। ओशो की सारी बातें मुझे मंजूर नहीं है। 'आनो भद्रा क्रतव:।' इस देश का ऋषि कहता है, मुझे सुंदर विचार दसों दिशाओं से प्राप्त हो। यह हमारा संकल्प है। अहोभाव के साथ कहूं, विनोबा भावे की दाढी। 'देश दखणनो बावो'; भगतबापू के लिए दखण से आया। भूदान प्रवृत्ति, स्वाश्रय और सर्वोदय का प्रेणेता। जिनकी समग्र मूवमेन्ट में भगतबापू सम्मिलित हुए। दाढी जिनको सोहे उन्हें ही सोहे। गांधीजी को होती तो वे कैसे लगते!

आप देखिए, ऋषि का घर होता है। कागबापू का आश्रम नहीं था, एक कच्चा मकान था। पेटलादवाले स्वामी सच्चिदानंदजी ने आवासों का वर्गीकरण किया। उन्होंने कहा, अमुक प्रासाद है; राजा महाराजा के पेलेस होते हैं। उसमें रहनेवाले कम और नौकर-चाकर ज्यादा होते हैं! कम सुविधावाले महल और हवेलियां जो श्रेष्ठी और श्रीमंतो के लिए होती है। फिर है घर जो हम सबके लिए हैं। एक सुंदर नाम दिया आश्रम। जहां अध्ययन, चिंतन, ध्यान, आत्मानुभव हो। खेती करे तो भी ध्यान-सा। आश्रम वह है जिसमें कुछ अघटित न हो। कलियुग के आश्रम की बात जाने दीजिए। आश्रम अदालत पहुंचे यह तो हमारी बेइज्जती है! ऐसा हो तब लगे कि आश्रम की पताका फरफराती नहीं, फड़फड़ाती है! आश्रम बहुत पवित्र नाम है। आश्रय दे वही आश्रम। आनंद दे वही आश्रम। आराम दे वही आश्रम। आहार दे वही आश्रम। आगम-शास्त्र दे वही आश्रम। दलित पुत्री को आश्वासन दे वही आश्रम। आंसू पोंछे वही आश्रम। आरोग्य दे वही आश्रम। सुविधा न हो पर उसकी आजीविका निर्वाह करे वही आश्रम। आश्रम को किसी के साथ विवाद नहीं होता। भगतबापू कहते हैं -

नोर लईने वाण बोळ्यां,
जेणे संतोनां छिदर खोळ्यां,
एजी...जेणे रंक रे पाडोशीने बहु रोळ्यां,
ए, तरछोडो एनां आंगणां हो जी...

यह तो समुद्र का आदमी। उसे पता है, भाडा लेकर दूसरों के जहाज डूबो दे उसके आंगन मत जाना। ये शापित आंगन है। इसे आश्रम नहीं कहते। घर भी नहीं। वह स्मशान भी नहीं है। स्मशान में तो महादेव है। भगतबापू ने बहुत बड़ी बात कही कि जो संतों के छिद्र खोले ऐसे लोगों के आंगन छोड़ दीजिए। जो लोग समाज के छिद्र छांप दे उसके छिद्र जो खोले! तुलसीजी वही कहते हैं। यह बापू ने तो तुलसी का आकंठ पान किया है। तुलसी संत कवि, यह भक्त कवि। कालिदास महाकवि, वाल्मीकि आदि कवि, शंकर अनादि कवि। मैंने पहले भी कहा था, वंश की प्रशंसा करने नहीं बैठा हूं। इस कवि को देखूं तो आदि कवि के लक्षण दिखाई देते हैं। कभी संत कवि लगता है। लोककवि, भक्तकवि तो है ही। महाकवि भी है। क्या नहीं है? ओल इन वन। यह बापू भी कभी अंग्रेजी बोलते थे। मैं विद्यार्थी था तब जे.पी.पारेख ग्राउन्ड में बोले थे।

यह गृहस्थ है अत: कागऋषि कहूंगा। यह दाढीवाला उदार है। तो ऋषि कहूंगा। श्रमिक है अत: कागऋषि कहूंगा। बुद्ध के शब्दों में कहूं तो इसमें सब सम्यक् है। अत: कागऋषि ही कहूंगा। जिम्मेदारी के साथ कहता हूं, कागबापू अकस्मात नहीं, व्यवस्था है।

अस्तित्व ने तय की हुई कोई नियति होगी। इस संबंध में ऋषि के लक्षण मुझे कहने हैं। ऋषि का पाथ होता है, पंथ होता है। पंथ माने बाडा नहीं, संकीर्णता नहीं। पंथ माने स्वयं निर्मित निजता का मार्ग होता है। पगदंडी तो पगदंडी पर स्वयं की। कागभुशुंडि सभी रास्तों का जानकार था। फिर भी उसका अपना भक्तिपंथ था।

भगति पच्छ हठ नहि सढताई।
दुष्ट तर्क सब दूरी बिहाई।।

कागभुशुंडि ने एक पंथ तय किया था। गुरुकृपा से उन्हें राम के रहस्य मिले हैं। भुशुंडि को गुरु ने आशीर्वाद दिए वह सूचि तो पढिए! जो चार लक्षण दिखाई देते हैं भुशुंडि में, उनमें से एक आशीर्वादक रास्ता था, वह था दृढतापूर्ण भक्तिपंथ। ज्ञान की आलोचना नहीं है। इसी आदमी ने ज्ञानदीप की अद्‌भुत बातें की है 'उत्तरकांड' में। उपनिषद के चार वाक्यों के बाद पांचवा वाक्य कहा, 'सोहमस्मि इति वृत्ति अखंडा।' कागऋषि का सबमें प्रवेश है। परंतु उसका मूल पंथ भक्ति है, प्रेम है, शरणागति है। मजबूती से राह पकड़ी है फिर भी शठता या लुच्चाई नहीं है। मैं दूसरों के मार्ग को नहीं काटूंगा। निंदा नहीं करूंगा। भक्ति को मजबूती से पकड़ रखिए। पर भक्ति में लुच्चाई न आने दे। आज साढ़े तीन पाला बैठा है! शब्द सरस है! उन्होंने तीन कदम भरे थे पर ये चारण तो साढ़े तीन! यह सरस्वती, भवानी की रेन्ज है। मेरा तुलसी राम का वर्णन करता है। वंदना करने से पूर्व सीताजी को याद करता है -

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम्।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम्।।

जानकी ने क्या कहा? हे माँ, हे भवानी, समस्त जग को जन्मदेनेवाली तू, पलने में झूलानेवाली तू, दुलार करानेवाली तू, बुराईयों का नाश करनेवाली भी तू; और स्तुति तो देखिए -

जय जय गिरिबरराज किसोरी।
जय महेस मुख चंद चकोरी।।
जय गजबदन षडानन माता।
जगत जननि दामिनि दुति गाता।।

ज्यों-ज्यों जानकी स्तुति करती जाय ऐसे ही आशिष माँ भवानी देती जाय। सर्जक के वचन झूठे नहीं होते। पालक के वचन गलत नहीं होते। बुराई का नाश करने अवतरण किया हो उनके वचन झूठे नहीं पड़ते। यदि अपना मार्ग बगैर दुष्टता का हो तो प्रतिभाव मिले, जवाब मिले।

मैं राम को मानता हूं तो राम के मंत्र को हठ से पकड़ रखूं। पर लुच्चाई से दूसरे के मन्त्र को तोडूं नहीं! मेरा जीवनग्रन्थ 'रामचरित मानस' हो तो मैं अन्य धर्मग्रंथ की आलोचना न करूं, लुच्चाई न करूं। ऐसा मार्ग जो तय करे वही ऋषि है। कागऋषि, कागभुशुंडिजी भक्तिपंथ के हो फिर भी उन्हें पता है ज्ञानपंथ का। ज्ञानदीप प्रज्वलित करने में कितनी मेहनत करनी पड़ती है! प्रथम गाय रखनी पडे, हरा चारा डालना पडे, अपने खेत में चरानी पडे। दोहते वक्त कपड़ा बांधना चाहिए; अच्छा बर्तन होना चाहिए; दोहनेवाला अहीर होना चाहिए। इस पंथक में आहीर, काठी दरबार है। मुझे आदर है। आपकी खानदानी, शालीनता प्रति आदर है। भगतबापू ने कैसे इकठ्ठे किए हैं! व्यासपीठ पर से कभी दो शब्द कहूं तो सुन लीजियेगा। सब ठीक करने की कोशिश कीजियेगा। मुझे अधिकार है।

मैं क्षत्रियों को तो कहूं कि मैं तुम्हारे बाप के गुणगान करता हूं, सूरज के! यहां सब काम पर लगे हैं। आहीर, कोली, क्षत्रिय समाज। यहां कोई जातिभेद नहीं है। सबको अपने-अपने संस्कारों का परिचय है। छोटे से छोटा आदमी कार्यरत है। सब अच्छे इकठ्ठे हुए हैं। साढे तीन पाला तो है ही! बाप, मैं बहुत प्रसन्न हूं। बाप, ये सब माताजी बैठी है। ये सब को किसी की नज़र न लगे ऐसा करना। संघर्ष छूटे, बैर छूटे, व्यसन-चमत्कार छूटे,

और स्वस्थ मानव जन्म ले। इस जगत में आप ऐसा करते जाईयेगा। मैं तो करूंगा ही।

मैंने गोंडल में देवीपूजक की कथा कही तब कहा था, आप बलिप्रथा-खानापीना बंद कीजिए। आपको जो कुछ भी हो, मुझे दे दीजियेगा। एक देवीपूजक की चिठ्ठी है, 'बापू, वर्ल्डकप चालू हुए और यहां आपकी कथा! मुझे लगा कथा सूनुं या मेच देखूं? मुझे मेच अच्छी लगती है। उसे छोड़कर मैं यहां आया हूं!' यहां वर्ल्ड कप नहीं, युनिवर्सल कप शुरू हुआ है। फिर भी बेटा, तुझे मेच में आनंद आता हो तो वहां जा। मैं किसीको बांधता नहीं।

मुझे सब भाते हैं। क्या करना? कहां जाय? कोई उपाय नहीं सूझता। एक ही बात है, मुझे सब भाते हैं। मेरा हनुमान यह सदा ऐसा ही रखे। कोई कुछ बोले, कहे मुझे सब जानकारी होती है। पर मैं कहूं, कोई निंदा करे तो ऐसी कृपा भगवान करना कि मुझे इसकी जानकारी न मिले। क्योंकि मुझे उसके प्रति दुर्भाव होगा तो मेरा भजन कम हो जायगा! मुझे नुक्सानी का धंधा नहीं करना है। अल्लाह करे, मुझे पता न चले। आप मुझे कितना आदर, श्रद्धा, प्रेम देते हैं! धन्य हैं आपको बाप!

एक देवीपूजक के घर हम गए थे तब कहे, 'बापू, समाधि ले लूं पर वो बंद नहीं होगा! देवी को भोग लगाना ही पड़े!' एक देवीपूजक युवक को उसके बापा ने कहा, 'तू रोज बापू के पास जाता है, कभी मुझे भी ले चल।' लड़के ने कहा, 'आप खाना-पीना-काटना बंद करे तो ले जाउं।' यह कैसे हो रहा है? माताजी सबकी रक्षा करे, बाप। मूलबात ज्ञानदीप की थी। गाय को दोहनेवाला अहीर -

नोइ निबृत्ति पात्र बिस्वासा।
निर्मल मन अहीर निज दासा।।

सुंदर मनवाला अहीर हरि का दास हो वो जब गाय को दोहता है। 'नोई निवृत्ति।' और 'पात्र बिस्वासा।' पात्र विश्वास का हो। इस तरह पात्र में दूध को जमाए, फिर मथे, मक्खन निकाले, गर्म करे फिर नारायणपरूपी घी निकले। ऐसा तत्त्वज्ञान तुलसी ने लिखा है। दीप प्रज्वलित के बाद दीप को बुझाने के लिए भी तीन विधियां होती है। छल से; बगल से पता भी न चले इस तरह निकलकर यूं बुझा दे! बल से; मुझे ना कहनेवाले आप कौन? फूंक मारकर बुझा दे! कल से; न पकड़े जाय इस तरह दीप बुझा दे! ज्ञान की ज्योति में कई विघ्न है। पर हे गरुड, भक्ति ज्योत नहीं, मणि है। भक्ति मणि में न घी, न दीप, न बाती कुछ भी नहीं चाहिए। वह स्वयं प्रकाशित मणि है। ऐसा भक्तिपंथ यह मानुष ने स्वीकारा है।

ऋषि का पहला लक्षण किसी मार्ग का खंडन न करे। अपने जीवन का एक मार्ग तय करे। सब जानता हो पर लुच्चाई जरा भी नहीं। ऋषि वही है जिसने अपना पंथ निश्चित किया हो। जिसने अपनी यात्रा में संगी साथ में लिया हो। यात्रा में साथी भी चाहिए। खाद्यान्न भी चाहिए। मेरा तुलसी किसका साथ लेने को कहता है?-

जे श्रद्धा संबल रहित नहिं संतन्ह कर साथ ।
तिन्ह कहुं मानस अगम अति जिन्हहि न प्रिय रघुनाथ ।।

ऋषि वह जिसे किसी का साथ हो। भुशुंडि को किसका साथ था? हंसों का, परमहंसों का; विविध प्रकार के विहंगो का; स्वयं काग है।! तुलसी के 'मानस' में छब्बीस बार 'काग' शब्द आया है। तुलसी ने परिकम्मा की है और उसे हर एन्गल से देखा है।

दाहिन काग सुखेत सुहावा।

जब शगुन शुरू हुए। 'दाहिन' काग दायीं ओर शगुन देता है। साहब, मेरे राम ब्याहने गए तब सबने पहले काग ने शगुन दिए। द्रविड संस्कृति में भी काग पूजा जाता था। काग अपने पितृओं का प्रतीक है। काग अमरता का प्रतीक है। काग श्रद्धा और श्राद्ध का केन्द्र है। महिमाशील पक्षी है। भगवान करे, इनकी संख्या कम न

हो। उनके बचाने के प्रयत्न होने चाहिए। मेरे लिए काग तो बचना ही चाहिए। मैं कागभुशुंडि की रोटी खाता हूं। 'रामायण' के चार प्रवक्ता तुलसी, याज्ञवल्क्य, शंकर। पर मुझे व्यक्तिगतरूप से नंबर देना हो तो प्रथम नंबर कागभुशुंडि ही को दूं। शरीर काग का, आत्मा हंस की है, परमहंस की है। क्योंकि उन्होंने अपना पंथ निश्चित किया है।

कथा सुनकर अपने विवेक से हर एक को अपना-अपना मार्ग तय करना चाहिए। फिर उसमें दुष्ट तर्क, लुच्चाई नहीं होनी चाहिए। कोई दूसरा साथ होना चाहिए। किसका साथ है भुशुंडि को? संत, हंस, परमहंस, ऋषिमुनि, पक्षीयों के रूप धरकर कथा सुनने आते थे। रामसुखदासजी कहते थे, हंस को निमंत्रण न दे। हमारे पास सुविधा हो तो आंगन में मोती फैला दे। हंस अपनेआप आयेंगे। यूं अच्छे विचार पसारते जाय। अच्छे भाव फैलाते जाय। सुंदर संकल्प रखते जाय। तब कोई न कोई साधुरूपी हंस आकर खड़ा हो जाता है। हम हंस को कैसे जाने? भुशुंडि की सभा में शंकर को क्यों नहीं जान सके? वे तो आखरी पंक्ति में बैठ गए थे! पहचान कहां हो पाती है?

भगतबापू ने सभी खेत जोते। पर उनका पंथ भक्ति का था। और उनका साथ? कैसे कैसों का साथ? पीपावाव महंत, अखीगढ हरिवल्लभबापू, मणिशंकरदादा भागवतकार, त्रिकमदासबापू, समर्थ भागवतकार नरेन्द्र शर्मा, राजुला। मोहनदासबापू शास्त्री। राजकीय क्षेत्र में ढेबरभाई और दिल्ली का पंथ ले तो भगतबापू के आने से सब खड़े हो जाए! मेरुभाबापू, जयमल्ल परमार, मेघाणी, मगनबापा, हमारे साधु बगसरा, गोंडलिया। सब से बड़ा साथ सोनलमाँ का। जिसे बडों का साथ हो उनको सब का साथ मिले। सलाह का स्थान, बैठने का स्थान, पूछने का स्थान था। ऋषि का साथ- संगाथ देखे तब उनके ऋषित्व का पता चले।

ऋषि का तीसरा लक्षण, सिर पर किसी का हाथ होना चाहिए। 'उत्तरकांड' में लोमश को पढिए। प्रसन्नचित्त महर्षि लोमश भुशुंडि के सिर पर हाथ रखता है। फिर आशीर्वाद शुरू हुए हैं। पहला वचन -

सदा रामप्रिय होहु तुम्ह सुभ गुन भवन अमान।
कामरूप इच्छा मरन ग्यान बिराग निधान।।

तू भुशुंडि, रामप्रिय होगा। तुझे राम बहुत प्रेम करेंगे। तुझे परमेश्वर प्रेम करेंगे। तुझ में बहुत सारे गुण इकठ्ठे होंगे। 'गीता' में वर्णित सभी दैवी संपदा का भंडार बनेगा। 'कामरूप'; जैसा काम होगा ऐसा रूप तू धारण करेगा। इस दाढी को राजकीय क्षेत्र हो, समाज हो, जहां जाय वहां ऐसी चर्चा करे। जैसा काम वैसा रूप। 'कामरूप इच्छामरन', लोमश कहे, तेरी इच्छा पर ही मरेगा। बाकी काल तुझे मार नहीं सकेगा। उर्दू का शे'र है -

कज़ा को रोक देती है दुआ रोशन ज़मीरों की।
भला मंज़ूर है अपना तो कर खिदमत फ़कीरों की।

इच्छा मृत्यु; 'महाभारत' में भीष्म को यह वरदान था। मुझे 'महाभारत'में नहीं जाना है। आज मुझे रामजन्म करवाना है। दूसरा भुशुंडि है। तो बाप, किसी का सिर पर हाथ ऋषि का ऋषित्व है। तू जहां रहेगा वहां एक योजन तक माया का तंतु भी नहीं दिखाई देगा।

तो, जीवन में कोई पंथ होना चाहिए। किसी का सुंदर साथ होना चाहिए। किसी का हाथ सिर पर होना चाहिए। कोई अपना नाथ होना चाहिए। केवल इष्ट नहीं, कोई भी श्रेष्ठ हो तो वह भी नाथ है। जीवन में कोई एक पंथ, एक संत, एक ग्रंथ और कोई एक कंत होना चाहिए। यह पूरे चारण समाज ने तो बाप, इस माँ का आशीर्वाद लिया है। अहोभाव भी रहना चाहिए। जिम्मेदारी का स्मरण भी रहना चाहिए। बापू कहे, माँ तू कहां है -

माडी तारां बेसणां गढ गिरनार,
नवे खंड नजरुं पडे रे लोल...
माडी तारे दाणे रे दाणे दीनोनाथ
मारो विश्वंभर वातुं करे रे लोल...

अब महत्त्वपूर्ण पंक्ति -

माडी, तुं तो दारूने देशवटो देती,
अने अंबा अवतरी रे...

तो, अपना सुंदर पंथ हो, संग हो, साथी हो। 'मानस' में भरत की माँ कैकेयी। इसकी महिमा कौन कहे? भरत भक्त शिरोमणि है। उसकी माँ की बुद्धि कुसंग से भ्रष्ट होती है तो हमारी क्या हैसियत? कुसंग से बचिए। 'मानस' में लिखा है, 'रहई न नीच मते चतुराई।' तुलसी कहे, नीच के संग से सरस्वती और चतुराई बिदा लेते हैं। हम सबके सिर पर कोई हाथ होना चाहिए। बीस भुजाओं का हाथ है। एकाध ग्रन्थ हो। किसी अवतार चरित्र को लेकर कथा करे तो वह अवतार लेने तत्पर न हो जाय? कोई ईसरदान को लेकर चले, 'हरिरस' का पठन करे; पताका अकेली न फरफर हो, दीवार भी फरफर हो। मैं हंमेशा कहता हूं कि मुझे हरिरस का एकाध टुकडा सुनाइये। कैसा लिखा? कौन-सी चैतसिक भूमि पर से यह सब ऊतरा है?

आपके पास कैसी स्तुतियां है! बाप, आप पांच मिनिट कमरा बंद कर अगरबत्ती का धूप कीजिए। समस्या के जवाब आप कहे इससे पहले मिल जायेंगे! ये सब मंत्र हैं। मैं तो कहूं कि गांधीकथा होती है; सरदारकथा होती है; मेघाणी की कथा होती है; बेटियों को लेकर होती है; नारीकथा होती है। कागबापू की एकाध कथा न हो? कागकथा हो सकती है। हम तो बिखरी बातें करते हैं। आप सबके पास भंडारा है। थोक है। यह उठाने जैसा कदम है।

मैं जहां तक समझा हूं, भगतबापू के पंथ को, क्षेत्र काफी है उनके, किसी भी विषय को लो, यह आदमी सभा जीतनेवाला था। भीतर से तो उनका मार्ग भक्ति का था। झोंपडे का मानुष। अभी तक वही ऊपरी मंजिल है। मैंने पांव छुए थे। उन्हें बंगले से नफरत नहीं थी। पर उन्हें पता था कि झोंपडें और बंगले के बीच क्या फ़र्क है?

बोलो, भाई! बंगला! बोलो... हैयानी हाटडी खोलो...
भाळेलुं जीभथी भाखो... रुदामां न संघरी राखो...

और बंगले को बोलता किया! जड़ को वाणी दे वही सर्जक।

'काग' ए आखर बंगलो बोल्यो, सुणवामां नथी सार,
'ईश्वर!' कोईने आपीश मा आवा बंगलानो अवतार.
हिमाळाना मारगे जावुं, नानी एवी झूंपडी थावुं.

रजवाडे की शर्म नहीं रखता था। स्वयं न पहुंचे तो त्रापजकर को कहे, आप कह दीजियेगा। त्रापजकर को कैसे भूलें? कैसी उनकी बैठक थी! कितना सुंदर भक्तिमार्ग था! कैसा साथ था! सिर पर जोगमाया का हाथ था। कल मैंने पांच निष्ठाएं कही। रामनिष्ठा, कृष्णनिष्ठा, जगदंबा की निष्ठा, शिवनिष्ठा, इसके पिंड थे कागबापू!

कथा के क्रम में भरद्वाजजी याज्ञवल्क्य के पास ब्रह्मजिज्ञासा करते हैं, 'अथातो रामजिज्ञासा'; रामतत्त्व क्या है? जिसका चौबीस घंटों शंकर रटना करते हैं; वेदपुराण, उपनिषद जो रामनाम की महिमा गाते हैं। ऐतिहासिक रामजी को मैं जानता हूं। मुझे आध्यात्मिक राम का खुलासा कीजिए कि रामतत्त्व क्या है? प्रश्न पसंद आया है। हंसकर कथा का आरंभ किया है। रामकथा का दो पंक्तियों में चार चरण में महिमागान किया है। कोई भी वक्त महिमा गाये बिना नहीं रह सकता।

रामकथा ससि किरन समाना।
संत चकोर करहिं जेहि पाना।।
महमोहु महिषेसु बिसाला।
रामकथा कालिका कराला।।

राम चंद्र है, रामकथा चंद्रकिरन है। चंद्र दिखाई दे पर अपने घर नहीं आए। किरनें आती है। राम तो ब्रह्म है, चंद्र है। उसकी कथा किरनें हैं। अपने झोंपडे तक आए। यदि अपना हृदय खुल्ला हो तो अपने घट तक भी आए।

महिमागान के बाद कहा, अब मैं तुम्हें शिवचरित्र सुनाऊं। पूछी रामकथा और उद्घाटन किया शिवकथा से! यह था तुलसी का सेतुबंध। वैष्णवों और शैवों में कोई भेद न रखे। राम-कृष्ण-शिव में अस्पृश्यता न रखे। राम तो गर्भगृह में है। शिव तो दरवाजा है। सुंदर शिवकथा कही है। साहब, शंकर के ब्याह तक की कथा कही है।

तुलसी के 'मानस' में छब्बीस बार 'काग' शब्द आया है। परिक्रम्मा की है, तुलसी ने उसे हर एक एंगल से देखा है। साहब, मेरे राम ब्याहने गए तब काग ने प्रथम शगुन दिया था। द्रविड संस्कृति में भी कौओं की पूजा होती थी। काग अपने पितृओं का प्रतीक है। काग अमरता का प्रतीक है। काग श्रद्धा और श्राद्ध का केन्द्र है। महिमाशील पक्षी है। भगवान करे, कौओं की संख्या कम न हो। चिडियां कम होती जाती है। बचाने का प्रयत्न होना चाहिए। कौआ तो मेरे लिए बचना ही चाहिए। मैं कागभुशुंडि की रोटी खाता हूं। 'रामायण' के चारों प्रवक्ता तुलसी, याज्ञवल्क्य, शंकर। वैयक्तिक रूप से भुशुंडि को ही प्रथम नंबर दूं। शरीर तो कौए का पर भीतर हंस का है, परमहंस का है।

कथा-दर्शन

- 'रामायण' का संग करने से अपना विवेक बढ़ता है, शील बढ़ता है।
- जो 'रामायण' पर बोल सके वह सभी विषयों पर बोल सके।
- भरोसे के मार्ग पर चलनेवालों को 'रामायण' शक्तिदायी है।
- जो अच्छा वक्ता होना चाहते हैं, उन्हें अच्छे श्रोता होना चाहिए।
- कथाकार बड़ा नहीं होता, कथा बड़ी होती है।
- गुरु वही है जो शिष्य से कुछ लेता नहीं है बल्कि कई गुना देता है।
- कोई गुरु नहीं चाहता आप उनके पैर पकड़े, पर उसका अपराध मत कीजिए।
- साधु की विनम्रता का गलत अर्थ न करे।
- यह देश व्यक्ति की नहीं, उसके पद की पूजा करता है।
- बिना कर्णधार जहाज नहीं सुहाता, उसी तरह बिना भक्ति ज्ञान नहीं सुहाता।
- विवेक दृष्टि आने के बाद सभी वंदन करने योग्य लगते हैं।
- मानव का आध्यात्मिक जीवन भी पंचतत्त्व का बना हुआ पंचवटी है।
- हमारे संशय अपने हरि से हमें दूर रखते हैं।
- अहंकार मार डाले, विश्वास जीवित रखे।
- नियम बांधे, व्रत मुक्त रखे।
- तप की उद्घोषणा न हो, तप को छिपाइए।
- सयाना आदमी गम खा ले, खिलायें नहीं।
- दृष्टि बदलने पर दर्शन बदलता है।
- जड़ में जीव डाले वही सर्जक है।
- द्वेष और इर्ष्या समानधर्मी को ज्यादा सताता है।
- अणु की खोज हिंसा को स्थापित करती हैं और आंसू की खोज करुणा को स्थापित करती है।

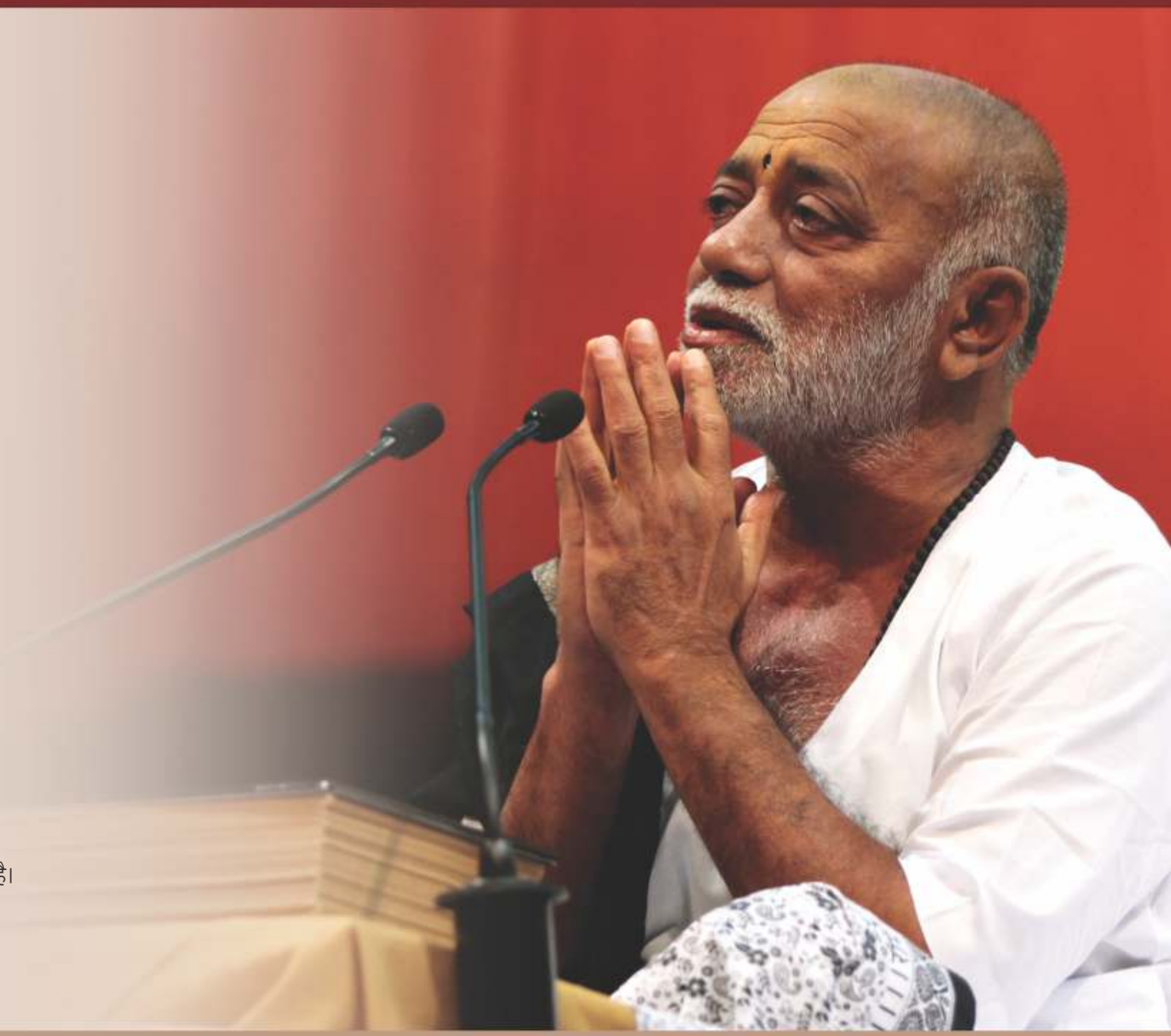

मानस-कागऋषि
:: ६ ::

भक्त के जीवन में बंदगी और सादगी का समन्वय होता है

पार्वती ने प्रश्न पूछा है शिव से और उत्तर में शिवजी ने कागऋषि का चरित्र कहा। वहां जाकर गरूड ने क्यों कथा सुनी? गरूड तो ज्ञानी, गुणराशि, विष्णु का वाहन; वे मुनिओं का संग छोड़कर काग के पास कथा सुनने क्यों गए? दोनों के बीच कौन-सा संवाद हुआ? मुझे सुनना है क्योंकि 'दोउ हरि भगत', दोनों हरिभगत है। 'मानस' में कहा है, 'श्रोता वक्ता ग्याननिधि', दोनों ज्ञाननिधि है। तो ही राम की गूढ़ कथा समझ में आ सके। ऐसे संवादों के अंशों का हम स्पर्श कर रहे हैं। मेरा मूल केन्द्र 'मानस' है। उसे पकड़कर मैं बोलता हूं। 'मानस' में दार्शनिक मत है। आचार्यों के सभी मतों का प्रतिपादन हुआ है। जिम्मेवारी से कहता हूं। इसमें दार्शनिक मत भी है और लोकमत भी है। मुनिमत भी है। राजनीतिज्ञों का मत भी है। साधुओं का मत भी है। भावात्मक, गुणात्मक पक्ष भी है। सांख्य-न्याय का मत भी है; वैश्विक दर्शन भी है। गुरुकृपा से हम कह सकते हैं-

नानापुराणनिगमागमसम्मतं यद्
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि।

आप का ध्यान खींचूं। 'साधु', 'संत' और 'भगत' ये तीन शब्द है। कल मैंने कहा था, ऋषि और मुनि यह पर्यायवाची भी है। 'मानस' में और अपने-अपने मौलिक अर्थ भी है। कल इसके आधार पर ऋषि के चार सूत्रों की चर्चा की जो भुशुंडि में दिखती है। भगतबापू में भी है। वह लिंक हमने जोड़ी। भाषा में किसी वस्तु को आप बढ़ा-चढ़ाकर कहे तो उसे अर्थवाद कहते हैं। प्लीज़, यह अर्थवाद नहीं है। यह वास्तववाद है। हमने कागभुशुंडि को नहीं देखा है। हमने कागबापू देखे हैं, सुने हैं। आनंद लिया है। आज ये तीन शब्द संत, साधु, भगत। यहां गरुड और भुशुंडि दोनों हरिभगत है। हम कागबापू को भगतबापू कहते हैं।

तुलसी संत, साधु और भगत को एक पंक्ति में रखते हैं। प्रसंगों के बदलने से संदर्भभेद होने से अर्थघटन भी बदल जाते हैं। संत के अनेक अर्थ है। पर देशी भाषा में जिम्मेवारीपूर्वक कहना हो तो मुझे सरल लगता है। आप के पास पक्का करता हूं। इतनी वस्तु दिखे तो संत जानिए, बाप! परिकम्मा कर हर ओर से देख लेना। मंदिर में भी परिकम्मा का यही भाव है। इस संत की बात जो मेरी समझ में आई वह कहूं। आप के जीवन का सत्य बने वह आप का। हमें 'संत' शब्द क्यों इतना पसंद है? क्यों गाते हैं? इस देश और विश्व को क्यों संत के प्रति इतना आदर है? संत कोई डिग्री नहीं। संत तो पकते हैं।

मैं अपनी पचपन साल की यात्रा में देखता हूं कि यह सावज़ जैसी दरबार और काठी कौम, आहीर और भिन्न-भिन्न जाति-प्रजाति, उनकी खानदानी और पौरुष के लिए कहता हूं। बाकी वर्ण और जाति के लिए मेरी पास कोई जगह नहीं है। सब के पास अच्छे घर और अपनी खानदानी है। उसे कैसे भूले? साहब, शेर जैसे मर्द होते हैं। पर साधु के पास जाते ही गाय जैसे हो जाते हैं! ऐसी खानदानी बरकरार रहे अत: मैं व्यासपीठ से पुकार देता हूं। मुझे दाने उधार नहीं लेने हैं। मेरे दादा के दाने बोने निकला दूं। जिस कमरे में सूर्य को जाने की छूट नहीं है वहां ये लोग साधु को भेजते हैं। जहां मूछोंवाले एक ओर रह जाते हैं और साधु को कहे कि बापू, जरा हो आईए न; बहन-बेटियों को मिल आईए न। बाप, हर कौम में यह अस्मिता पड़ी है। चारण कैसा होना चाहिए? क्षत्रिय कैसा होना चाहिए? मित्र कैसा होना चाहिए? मर्द कैसा होना चाहिए? इस बापू ने कहने को कुछ छोड़ा है क्या? एक-एक का कोष्टक तैयार किया है। संत किसे कहेंगे?

सो सो नदियुं जेने उर समाणी सायर जल गंभीर
जेनी मेरु सरखी धीर, जगमां अेनुं नाम फकीर।

यह अपनी एकता, अपना समन्वय, अपना भाईचारा; लूकाठी करनेवालों से सतर्क रहना। राजनीति हो तो सजग रहना। धर्मनीति हो तो भी सतर्क रहना। समाजनीति हो तो भी सजग रहना। आप गांव में जाइए। दायरा बैठा है। मुझे कहते थे बापू, सब इकठ्ठे होंगे? मैंने कहा, मूल में शंका क्यों करते हो? मेरा हनुमान सब को इकठ्ठा करेगा। जोगमाया करेगी। हम सब के भाग्य में इकठ्ठे होना ही है। यह तो हमारे स्वार्थ और मलिन मति, कुछेक विचार हमें अलग-अलग कर देते हैं। आप दायरा करे, संगीत सुनाए तब कितनी एकता सधती है! रामचरित्र या रामलीला की अपेक्षा रामकथा का महत्त्व है। चरित्र और लीला को जोड़कर यह कथा सभी दिलों को जोड़कर एक करती हे। कथा सफल माध्यम है। इसमें मोरारिबापू की महिमा नहीं है। भगवान की कथा साड़े तीन क्या, सात पाला या इक्कीस पाला इकठ्ठा कर सकते हैं, हम बिना कारण शंका न करें तो।

रामनाम की कृपा से ये इकठ्ठे हुए हैं। मोरारिबापू के कारण नहीं; भोजन-आवास अच्छे हैं इसलिए नहीं। ये सब गौण है, रामकथा मुख्य है। जगदंबा, आईमाँ, समझदार बुज़ुर्ग, छोटे बच्चे करे और अमुक भ्रांतियां टूटे तो हम एक ही है न! कैसा सुंदर चित्र है! यहां से देखिए तो पता चले! आना नहीं सा'ब! आज यहां इकठ्ठे हुए हैं उसका बड़ा परिणाम मिलेगा, वसंतभाई। ये बावा बोलते हैं। जब भी मिले। आख़िर हमें करना क्या था?

न धरा सुधी, न गगन सुधी, नहीं उन्नति, न पतन सुधी
अहीं आपणे तो जवुं हतुं फक्त एकमेकना मन सुधी।
-गनी दहींवाला

बाप! भेंदों की दीवारों को तोड़ दो। छोटे-बड़े झगड़ों को मेरी पोथी के पास रखकर जाना। छोटे-बड़े व्यसन भी तलगाजरडा की पोथी को अर्पण करके जाना।

छोटे-बड़े मनदु:ख को जला देना। कर्म का सिद्धांत है कि किया हुआ कभी व्यर्थ नहीं जाता। छप्पर फ़ाड के किया हुआ कैसे फेइल जाय? मुझे जल्दबाजी नहीं है। देरी हो तो भी हर्ज नहीं है। अपनी कोई ग्रंथि न छूटे इसमें अपनी कोई मज़बूरी होती है। हम आदमी है, कमज़ोरियां लगी रहती है। एक शे'र सुनिए। यहां शे'र कहने ही नहीं थे, यह तो दोहे का मोहल्ला है। फ़िर भी एक शे'र-

अगर नाचूं नहीं, तो पैर मेरे रूठ जाते हैं।
अगर नाचूं खूलके तो घूंघरुं टूट जाते हैं।

हमारी मज़बूरी होती है। गलतफ़हमी होती है। हमारा अहंकार होता है। हमारी मूढ़ता होती है। हमारी मज़बूरियां हैं। ऐसा नहीं कि लोग समझते नहीं है। हर एक की अपनी सीमा है। प्रयत्न जारी रखिए। भगतबापू ने लिखा है-

मुसाफ़िर मार्ग भूलेलो अने ऊतरतां काग अंधारा।
निरखतां गाम हरखायो पण हती नगरी धूतारानी।

प्रयत्न करने चाहिए। मेघाणी कहते हैं-

घनघोर वननी वाटने अजवाळतो, बापू!
विकराळ केसरियाळने पंपाळतो बापू!
चाल्यो जजे, तुज भोमिया भगवान छे, बापू!
छेल्लो कटोरो झेरनो आ पी जजो बापू!

बाप! हिंदुस्तान हर्षित होगा। गोलमेजी परिषद सफल न हो तो कोइ चिंता नहीं। उस भयानक सिंह पर हाथ फेर। अमुक समय उल्टा पड़े पर हिंमत हारनी नहीं चाहिए।

रामनाम से सेतु बना था। यों रामकथा से यह सब सेतु है। पर कहीं गुमराह हुए हैं। कहीं बिच्छू ने काटा है। कहीं थोड़ी पी ली है! जगदंबा की कृपा से कैसा सुंदर वातावरण है! मैं तो खुश हूं। मेरी तो पांच कथा गुजरात में हुई। इसका यह लटका है। इसका ज्यूस निकालता हूं। गुजराती में पंचक बैठा था! कोई कहता था, बापू को कोई बाहर से निमंत्रित नहीं करता है इसलिए गुजरात में ही बैठे हैं! प्रथम गुजराती कथा बडौदा से की थी। कच्छ, अहमदाबाद, सूरत। यह ग्रामीण गुजराती। यह बावा पांच जगह जा पहुंचा। फसल पके तो कहे, ले जाइए। पहले तो साधु ब्राह्मण को न दे तब तक अनाज घर नहीं ले जाते थे। अब सीधी बिक्री करते हैं! पहले बाली काटकर रामजी मंदिर में धरते थे। ये भूलना नहीं चाहिए। अब तो साधु आप को रोटी दे ऐसा हो गया है! कथा की मांग एक ही है कि व्यसन छूट जाय, घर्षण छूट जाय, वहम छूट जाय, अकारण छोटे-बड़े झगड़े छूट जाय।

कहां चलना कहां रुकना, समझना भी जरूरी है।
वर्ना जिसके लिए हम दौड़ते हैं, वह पीछे छूट जाते हैं।

कभी हम तेज गति से दौड़े तब हम जिसे पाने निकले हो वह पीछे रह जाता है! बैर-ज़हर में से निकल जाय, अदालती मुकद्दमें से निकल जाय। सरहद और नहर की तकरार से निकल जाय। ये जो तीन समझ लें फ़िर उसे भटकना ना पड़े।

तो, हम बात कर रहे थे कि चरित्र हमें निराश करे कि हम से ऐसा न हो सके और लीला में हमें संदेह होता है। पर इन दोनों में समाधानकारी तत्त्व कथा है। रामकथा ने साधु, संत, भगत को पर्यायवाची माना है। कभी-कभी संदर्भ भेद अनुसार अलग-अलग अर्थ भी किए हैं। मुझे पुनरुक्ति करनी है, संत किसे कहे? बाप, जो किसी के साथ कोई कारण हो तो भी तंत न करे वही संत है। संत को गुरुगद्दी परंपरा मिले तो महंत बने और संतत्व न खो दे वही संत है। पद मिलने के बाद पादुका न भूले वही संत है। सत्ता मिलने के बाद सत् बिसार न दे वही संत है। अपने यहां जगदंबा की इतनी बड़ी शक्तिपीठ है; हमें कोई गद्दी मिले पर मूल संतत्व का अंत न हो वही संत है। भगतबापू का पार्थिव देह गया पर उनकी कविता का अंत आयेगा? चौथा, भजन को बोझ

न समझें और लगनी से करे वह संत। मैं कभी भी कहने में बेगारी नहीं करता। साहब, यह मेरे जीने का साधन है। नहीं तो कब के खत्म हो गए होते! मेरा संपूर्ण आनंद यही है; श्वास यही है। साधु किसे कहे? जहां इतने 'सा' दिखे उसे साधु समझना। जिसका जीवन साबुन की तरह है वह साधु है।

मारे साबु रे थावुं ने जीवतर खोवुं,
जळ विना धोवा मेल रे...

रविशंकर महाराज कहते थे, 'उटकीने ऊजळा थावुं।' दूसरा, जिसका जीव सच्चा हो वही साधु है। हम उनके पास जाय तो हमें प्रतीति हो कि यह जो कहे वही सच है। इनका निर्णय सच्चा ही है। भीतर से हां सुनाई दे कि इसमें विकल्प का स्थान ही नहीं है। जिसका जीवन सरल वह साधु है। रजोगुण हो तो उस पर हाथ फेरकर समझाना कि अब यह ठाटमाट अच्छे नहीं लगते। टीका होगी। यह कागबापू क्यों पसंद है? इनकी सादगी तो देखिए! वैसा का वैसा ही रहा। और चौथा, जिनका जीवन समग्र समाज के सामने हो, वैसा का वैसा ही हो वह साधु। नरसैयों कहता है-

एवा रे अमे एवा रे तमे कहो छो वळी तेवा रे,
भक्ति करता भ्रष्ट थईशुं,तो करशुं दामोदरनी सेवा रे।

मुझे जो समझ में आया है यह व्याख्या भगत की है। जो बाहर से स्वच्छ और अंदर से पवित्र हो। चाहे भजन न गाता हो। भगतबापू तो लिखते थे, गाते थे, जीते थे। दूसरा, जिंदगी में बंदगी और सादगी का समन्वय होना चाहिए। बंदगी ऐसी कि हमें कुछ पता ही न चले कि वह कौन-सा धागा पकड़कर साधना करता होगा! अमुक वस्तु गुप्त रखनी है। इसका विज्ञापन नहीं होता। इस देश का ऋषि कहता है, मंत्र गुप्त रखिए। मेरे तुलसी ने 'मानस' में लेख लिखा-

जोग जुगुति तप मंत्र प्रभाउ।
फले तबहि जब करिअ दुराउ।।

आप इतनी वस्तु छिपाए तो ही फल दे, बाकी व्यर्थ जाय। योग को जितना छिपाईए, योगबल बढ़ता है। दो-पांच ने की हुई युक्ति छिपाए तो ही फलती है, बाकी विफल जाती है। तप को छिपाना चाहिए। मानव कितना सहन करता है यह जगत को बताने की जरूरत नहीं होती। सहनशीलता मुखरित हो तो उसी वक्त इसकी मात्रा कम हो जाती है। कम हो गई इसीसे मुखर होती है। दूसरों को प्रेरणा मिले अत: तप की अमुक अंश में विज्ञापन करो वह अच्छा है। बाकी विज्ञापन करो तो सब चला जाता है। तप की उद्घोषणा न हो। तप को छिपाना चाहिए। तप छूपता नहीं। गुरु ने दिया मंत्र छूपा रखना।

भगत में बंदगी और सादगी का समन्वय होना चाहिए। सचमुच बुद्धपुरुष हो उसकी उपासना की ख़बर ही नहीं लगती। कहां से सब आता है, पता ही न चलें। खेत की मेंड पर बैठकर यह आदमी कविता लिख डाले। यह सब कहां से आया होगा? कहां से उतरा होगा? तीसरा, भवन में रहकर वनवास भुगते उसका नाम भगत। रहे भवन में पर वृत्ति बनबासी की। रजवाड़ा में बापू का आवास हो। कागभुशुंडि जब अयोध्या के आंगन में जाते तब चौकीदार को कहा जाता था कि इस काग को मत उड़ाना। राम जिनके साथ खेलते हैं उस रामको पता है, यह कौन है? यह भुशुंडि भवन के आंगन में हो तो भी उनका बनबास भूला नहीं जाता। वहां तो छप्पन भोग होंगे। पर सोने की थाली में चोंच न मारे। वह तो राम की जूठन ही चोंच में ले। यह है वन्य जीव। यह माधुकरी है। यह काले रंग का संन्यास था। चौथा, पद-प्रतिष्ठा भगवान दे तो भी वह आख़िरी आदमी को भूले नहीं। उसीका नाम भगत है। नरसिंह को भगत क्यों कहते

हैं? पांचसौ वर्ष पहले का नरसिंह मेहता, नागरपुत्र। दलित समाज आकर कहे कि हमारे यहां भजन करने आयेंगे? उस दिन वह हाटकेश्वर का आंगन समझकर जाये। यह भगतबापू आख़िरी आदमी तक पहुंचे। इसीसे भगत का बिरूद उज्ज्वल किया। 'भ' को कुछ नहीं, 'ग' को कुछ नहीं, 'त' को कुछ नहीं उसीका नाम भगत! जिसे कुछ नहीं चाहिए। जिसे कोई अपेक्षा नहीं, फ़िर भी सब के लिए पूरा जीवन समर्पित कर चुका है। उसीका नाम भगत। जिसका पूरा जीवन अंजलि हो।

भुशुंडि के आश्रम बाहर नीलगिरि की धवलता, स्वच्छता और भीतरी पवित्रता। भुशुंडि की सादगी और उसकी बंदगी का किसे पता चला है? शंकर वहां जाते हैं। काग भवन में रहे पर जूठन ही खाय। चौथा, भगत को आख़िरी आदमी ही दिखे। भगत समाज आख़िरी आदमी तक पहुंचता है। हमें भी यह करना चाहिए। आप सोचिए। पांचसौ साल पहले नरसिंह मेहता ने क्रांति की होगी तो कितना सहन करना पड़ा होगा? पूरी नागर कौम, शिक्षित समाज के विरुद्ध जाकर भी क्रांति की होगी। गांधीजी ने बहुत काम किया। विनोबाजी ने गांव-गांव घूमकर किया। इसे साधु कहते हैं, संत कहते हैं, भगत कहते हैं। तुलसी तीनों को पर्याय मानते हैं।

'अरण्यकांड' के अंत में शबरी के कहने से राम-लक्ष्मण जानकी की खोज करते-करते पंपा सरोवर पहुंचते हैं। उसी समय महर्षि नारद आ पहुंचते हैं। स्तुति करते हैं। मन में पीड़ा है कि मेरे शाप के कारण भगवान कष्ट में है। भगवान ने नारदजी के मन का संकोच दूर किया। फ़िर नारदजी संतों के लक्षण की जिज्ञासा करते हैं। भगवान ने संत के लक्षण गिनाए। भगवान उपसंहार करते बोले, साधु के लक्षण तो सरस्वती और शेष भी नहीं कह सकते। अत: 'संत', शब्द आया 'साधु' शब्द भी आया और पूरा करे इतने में-

कही सक न सारद सेष नारद सुनत पद पंकज गहे।
अस दीनबंधु कृपालु अपने भगत गुन निज मुख कहे।।

नारद, मैं तुम्हें संत के लक्षण कहूं। जिसके कारण मैं उसके आधीन हो जाता हूं। साधु के गुण तो शेष-सरस्वती भी न कह सके। फ़िर समापन में कहा, भगत के गुण बताए। लम्बी सूचि है।

षट बिकार जित अनघ अकामा।
परम अकिंचन सुचि सुखधामा।।

शास्त्रीय लक्षण है। जिसमें षट्विकार खत्म हुए हो पर भुशुंडि में गिन गिनकर कह सके कि उनमें एक भी नहीं है। 'अनघ'; जिसका संग करने से हमें अनुभव हो कि यह मानुष निष्पाप है। 'अकामा'; हमारे साथ संबंध रखने में कोई हेतु नहीं होता। उसे कुछ भी नहीं चाहिए। 'परम अकिंचन'; बिलकुल अकिंचन भाव, अयाचक भाव। लाओत्से ऐसा कहे कि मैं ऐसी जगह बैठा हूं कि मुझे वहां से कोई खड़ा ही न कर सके। मैं जगह ही ऐसी पसंद करता हूं। तुलसीदास ने अकिंचन आगे 'परम' शब्द लिखा है। अकिंचन में दंभ भी होता है। हाथ से छूटे वह त्याग, हृदय से छूटे वह वैराग। सुचि; आंतर्-बाह्य पवित्रता। 'सुखधामा'; उसके पास जाए तो सुख मिले। हमें लगे कि कोई न उठाए तो अच्छा रहे या यह उठ न जाय तो अच्छा। ऐसा अनुभव जिनके सान्निध्य में हो उन्हें संत-भगत का लक्षण मानना। भगत का एक अच्छा लक्षण वह कवि है। जिनमें सर्जनात्मक प्रज्ञा है। चाहे गद्य हो या पद्य। वह बोलता हो गद्य में पर लगे कि पद्य में गाता है। ओशो के लिए ऐसा कहते थे। मैंने ओशो को दो बार सुने हैं। तब वे आचार्य थे। 'विष्णु सहस्रनाम' में परमात्मा का एक नाम कवि है। यह साढ़े तीन पाले में तो अतिशय गौरव होना चाहिए। मेरे पास आज प्रमाण है। अत: मुझे कहना है। मुझे याद दिलाया यह अच्छा हुआ। गीता प्रेस ने 'महाभारत' छापा। कभी अवसर मिले तो

हाथ में लेकर अभ्यास करना। युद्ध शुरू हो इससे पहले अभी 'गीता' कहनी बाकी है; तब माताओं, साढ़े तीन पालें को गौरव लेने जैसी बात है। ऐसा गौरव गर्व में न बदल जाय यह देखियेगा। आप को शास्त्र कितना सपोर्ट करता है! गौरव को पचाइयेगा। व्यास ने क्या सन्मान दिया है! भगवान योगश्वर कृष्ण अर्जुन को कहते हैं-

शुचिर्भूत्वा महाबाहो संग्रामाभिमुखे स्थित:।
पराजयाय शत्रूणां दुर्गास्तोत्रमुदीरय।।

तू दुर्गास्तोत्र का पाठ कर ले। अंबा को याद कर ले। 'गीता' तो बाद में कही पर पहले क्या कहा? साढ़े तीन पाले! अर्जुन ने दुर्गास्तोत्र का पाठ किया! इससे बड़ा गौरव क्या चाहिए? तलगाजरडा का बावा व्यासपीठ पर से प्रशंसा करता है। नोबेल प्राईझ नहीं, ग्लोबल प्राईझ है यह! यह व्यास ने दिया हुआ प्राईझ है। इससे बढ़कर कौन-सा सन्मान है? जोगमाया के संतानों, इसका गौरव लेना। पर गर्व नहीं करना। कारण? 'गर्व कियो सोई नर हार्यो...' तो कवि यह प्रभु का नाम है। भगत का भी नाम है। कवि संत को भी कहा है। 'अमित बोध', वह अमित प्रकार से बोध कर सकता है। अनेक क्षेत्रों में उसकी वाणी काम कर सकती है। 'मानस' संत-लक्षण से भरा शास्त्र है। तो कागभुशुंडि भगत है। उसी परंपरा को मजादर तक लाए, तो भगतबापू को भी हमने आदरसह पूज्यभाव से 'भगतबापू' कहा है। हमें उनमें भगत के लक्षण दिखाई देते हैं।

अब संक्षेप में रामजन्म ले। शंकर वेदविदित वटवृक्ष के नीचे बैठे हैं। उचित समय देखकर भगवती के पास गए। शिवजी को विशेष प्रसन्न जानकर जिज्ञासा की है। गत जन्म में रामचरित्र पर शंका की। अभी तक संशय के बीज नहीं गए हैं। आप रामकथा द्वारा मेरी भ्रांति का अंत लाइए। शिवजी ने हर्षित होकर रघुवीर चरित्र का आरंभ किया पर पहला शब्द निकला-

धन्य धन्य गिरि राजकुमारी।
तुम्ह समान नहिं कोउ उपकारी।।

'धन्य, धन्य हो हिमाचल कन्या। आप के समान जगत में कोई उपकारी नहीं है।' मैं जो बोलूं ये अंदर उतारियेगा। भगवान की कथा में जो निमित्त बने ऐसा दूसरा कोई उपकारी नहीं है। यह कागपरिवार का उपकार है। साढ़े तीन पाले चारण समाज का उपकार है। यह जीवंत ज्योत बैठी है। यह माँ सोनल बैठी है। इनका प्रताप है। क्योंकि यह निमित्त बनी। भगवद्कथा हजारों के मुख तक भजन

रामचरित्र या रामलीला से ज्यादा महत्त्व रामकथा का है। चरित्र और लीला को जोड़कर यह कथा सब के दिलों को जोड़कर एक करती हैं। इसमें मोरारिबापू की महिमा नहीं है। भगवान की कथा साढ़े तीन तो क्या, सात या इक्कीस पाले को जोड़कर एकत्र कर सकती है; हम बेवजह शंका न करे तो। भेद की दीवारों को चकनाचूर कर दो। छोटे-बड़े झगडें मेरी पोथी के पास रख जाना। छोटे-बड़े व्यसन तलगाजरडा की पोथी को अर्पण कर देना। छोटे-बड़े मतभेदों को जला देना। बाप! कर्म का सिद्धांत है कि किया हुआ व्यर्थ नहीं जाता। यह छप्पर फाड़ के किया हुआ कैसे फेइल जाय? और मुझे जल्दबाजी भी नहीं है। देरी हो तो भी हर्ज नहीं।

और भोजन पहुंचाए इससे बड़ा उपकार क्या है? जो कथा के आयोजक बनते हैं उन्हें सचेत करता हूं कि आप जैसा कोई उपकारक नहीं है। पर इसे अंदर उतारियेगा। मेरे पास ऐसे यजमान है जिनको पचा हुआ ही है; तो ही मेरे पास आते हैं। नहीं तो गुम हो जाय! मैं इनके पास सिलाई कराने या स्टिच के लिए नहीं जाता! कपड़ा फटे तो टांके लगवाऊं न? हरि भजते-भजते कलेजा फटा नहीं है, साहब! यह गुरुकृपा है। पर जो निमित्त बनते हैं इसका उल्लेख तो करूं न साहब! कितना खुशहाल समाज है!

शंकर कहते हैं, हे पार्वती, सभी को पावन करनेवाली गंगा आप ने पूछी है। आप धन्य है। जिसकी अलौकिक करनी है, वह राम हैं। निराकार, व्यापक परम सत्य ऐसे तत्त्व का नाम राम है। वही तत्त्व धरती पर साकार हुआ। यहां ईश्वर को कोई कार्य-कारण लागू नहीं पड़ते। फ़िर भी चार-पांच कारण कहता हूं। सनतकुमारों ने जय-विजय को शाप दिया। छल से व्रत तोड़ने पर वृंदा ने प्रभु को शाप दिया। नारद ने प्रभु को शाप दिया। स्वयंभू मनु शतरूपा ने नैमिषारण्य में हजारों वर्षों तक तप किया। तप के परिणाम से आकाशवाणी द्वारा प्रभु ने वरदान दिया। पुत्ररूप में जन्म लिया। प्रतापभानु राजा ने ब्राह्मणों को शाप दिया और प्रभु को अवतार लेना पड़ा। रामजन्म से पहले रावण की जन्म कथा है। सूर्यवंश की कथा कही इससे पहले निशिचर वंश की कथा बताई है। रावण वरदान संपन्न होने पर अत्याचार करता है। आसुरी वृत्ति से धरती परेशान है। गाय का रूप लेकर ऋषिमुनि के पास गई। ऋषिमुनि ने असमर्थता व्यक्त की। देवता भी कुछ कर न सके। सब साथ मिलकर ब्रह्माजी के पास गए। प्रभु ने आकाशवाणी से आश्वासन देकर निज प्रागट्य की बात कही। सब को आनंद हुआ।

अब तुलसीजी हमें अयोध्या ले जाते हैं। रघुकुल-सूर्यकुल की यह उज्ज्वल परंपरा है। क्षत्रियकुल के दायरे को सूर्यकुल की परंपरा सुनने जैसी है। कुल की महिमा का पता चले। 'वार्धक्ये मुनिवृत्तिनां', क्षत्रिय पुत्र को जब वार्धक्य आता है तो मुनि जैसा हो जाता है। छोटी उम्र में भरपूर अध्ययन करता है, स्वाध्याय करता है। यौवन में सभी रसों का आस्वाद करता है। कालिदास कितना प्रेक्टिकल है! जब परगने का, पादर का, पूरी दुनिया का नायक बने तब उसमें न्याय की तराजू रहती है। लोग राजा की मन्नतें मानते थे।

रघुकुलमणि महाराज दशरथ का अयोध्या में शासन है। धर्मधुरंधर है। गुणनिधि ज्ञानी है। कौशल्यादि प्रिय रानियां हैं। आचरण पुनित है। परस्पर पूरक जीवन जीते हैं। हरि भजते हैं। राजा को पुत्र अभाव की ग्लानि हुई। राजा गुरुद्वार जाते हैं। एकाध गलियारा, दरवाजा ऐसा रखना जब कहीं से जवाब न मिले तब उसके पास जा सके। जिसे अपना देश गुरुद्वार कहता है। दशरथजी सुख-दुःख के समिध लेकर गए। सुख की हरी और दुःख की सूखी लकड़ियां लेकर जाना है। शृंगीऋषि द्वारा पुत्र कामेष्टि यज्ञ हुआ। आहुतियां दी गई। अग्निदेव का प्रागट्य हुआ। प्रसाद की खीर दी गई। राजा को योग्यता अनुसार रानिओं में बांटने को कहा। रानिओं ने प्रसाद लिया। तीनों रानियां सगर्भा स्थिति का अनुभव करती हैं। तेज बढ़ने लगा। समस्त जगत में शगुन होने लगे। पंचांग अनुकूल हुआ। त्रेतायुग, चैत माह, शुक्ल पक्ष, नौमि तिथि, मध्याह्न का सूरज, विश्राम का समय। तीनों लोक में स्तुति होने लगी है। प्रभु चतुर्भुजरूप प्रगट हुए।

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्‌भुत रूप बिचारी।।

भगवान ने माँ को सर्व कथा कही। समाधान कर बालस्वरूप में माँ की गोद में पधारे हैं। रोने लगे। राजा ने घोषणा की। उत्सव मनाया गया। कागधाम मजादर के कागबापू के खेत से सोनल माँ की कृपा से, आई माताओं की उपस्थिति में, पूरे जगत को रामजन्म

मानस-कागऋषि
:: ७ ::

'रामायण' हमें कदम-ब-कदम शील सिखाती है

'मानस-कागऋषि' ; इस विषय को केन्द्र में रखकर हम साथ मिलकर चर्चा कर रहे हैं। तुलसीजी ने 'मानस' में कहा कि कागभुशुंडि और गरुड दोनों हरिभक्त हैं। तुलसीजी ऐसा कहते हैं। उसी कड़ी में भगतबापू को तो हम 'भगतबापू' कहते हैं। मेरी व्यासपीठ सोचने पर बाध्य है कि इन दो पक्षिओं में कितना साम्य है, कितना वैषम्य है। यह जांचते हुए अपने जीवन की आंतरिक यात्रा ज्यादा सरल हो सकती है। थोड़ा भेद, थोड़ा अभेद दोनों जानने की कोशिश करें।

एक गरुड, एक काग; दोनों हरिभक्त हैं। तुलसी 'मानस' में कहते हैं, श्रोता और वक्ता दोनों ज्ञाननिधि होने चाहिए। यहां मूढ़ कौन है? आंतर् दृष्टि से देखें तो 'ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।' कृष्ण कहते हैं, सब के हृदय में ईश्वर बैठा है; तो अज्ञान कहीं पर नहीं है। मेरा तुलसी कहता है-

अस प्रभु हृदय अछत अबिकारी ।
सकल जीव जग दीन दुखारी ।।

बड़ा प्रश्न है। 'गीता' के कहने से सब के हृदय में वह बसता है तो अज्ञान को स्थान बचता नहीं है! 'मानस' यों कहे कि 'हरि व्यापक सर्वत्र समाना।' परमात्मा हर जगह समानरूप से है। शिखर का प्रमाण दूं तो 'सर्वं खलु इदम् ब्रह्म।' यह अखिल ब्रह्ममय हो; नरसैयां को यह समस्त गेब-ब्रह्मांड 'ब्रह्म लटकां करे, ब्रह्म पासे', ऐसा लगा हो तो फ़िर यह जीव दुःखी क्यों है?

मोरारिबापू मजादर आए तो मोरारिबापू को जाना पड़े। ईश्वर के लिए आना-जाना ऐसा भेद तो उपनिषद ने भी स्वीकार नहीं किया है, न तो अनुभवीओं ने! ईश्वर है, है, है। समानरूप है। पूर्ण है। फ़िर भी कहता था उस निवेदन को याद करूं कि भगवान अयोध्या में से गए और चित्रकूट में रहे। क्यों? ईश्वर कहीं भी नहीं जाता और कहीं भी नहीं आता। मैं यहां हूं तो भीमबापू की बाडी में नहीं हूं। यदि मैं बाडी में हूं तो यहां नहीं हूं। पर ईश्वर समानरूप से व्यापक

है। अत: वह स्थलांतरित नहीं होता। ईश्वर वैकुंठ में हो पर वडाल में न हो? ईश्वर मानसरोवर में हो और मजादर में न हो? असंभव है। नितांत असंभव है। फ़िर ऐसा क्यों लगता है कि राम अयोध्या में से चले गए? हरि कहीं नहीं जाता। कहीं नहीं आता। 'रामायण' ने हम को सिखाया है कि कुसंग करते हैं तब हरि अपने पास ही होता है पर दिखता नहीं है। सत्संग करते हैं तब जो था वह खुलने लगता है।

बाप, हमें इतना ही समझने का कि पूर्ण परमात्मा हमारे अनुभव में नहीं आता। अपने दिल की अयोध्या छोड़कर कहीं किसीके चित्रकूट में चला जाता है, इसका एक ही कारण है कि हम कुसंग की लपेट में आ जाते हैं तब वह चला जाता है। इसकी जगह सत्संग स्थापित हो जाय तो वही राम पुन: दिखाई दे। रामकथा सत्संग है। वहां राम और सीता विहार करते अपने अनुभव में आए। अपने हृदय के हरि का हम क्यों अनुभव नहीं करते? हम दु:खी क्यों है? 'मानस' कहे, कारण कुसंग है। 'रामायण' में ऐसा लिखा है, 'हे ब्रह्मा, नर्कबास बेहतर है, पर दुर्जन का संग बहुत ही खराब है। हमारे संशय हमारे हरि को हम से दूर रखते हैं। कुसंग के कारण हम दु:खी है। ये सभी 'रामायण' के सूत्र है। मेरे होठ काम करते हैं। 'रामायण' में वक्ता कभी बड़ा नहीं होता। कथा ही बड़ी होती है। जिस दिन वक्ता को लगे मैं बड़ा उसी समय से बात खतम!

कागभुशुंडि की कथा में गरुड आए और भुशुंडि खड़े हो जाय। मेरा राजा आया, मेरा बाप आया। कागभुशुंडि समझते हैं कि यह मेरे लिए नहीं आया है। मैं कथा लेकर बैठा हूं इसीलिए आए हैं। कथाकार बड़ा नहीं होता, कथा ही बड़ी होती है। कथा बड़ी है अत: बड़े से बड़े छोटे हो जाते हैं। गरुड भी छोटे हो गए। क्योंकि कथा बड़ी है। भगतबापू कथा कहे और महाराजा सुनते हो, राजपरिवार सुनता हो।। हमारे भगवानजीबापा कथा करे तब राजपरिवार सुनता था। साहब, कथा इतनी महान है कि उसके आगे वक्ता, श्रोता, आयोजक, संयोजक, स्वयंसेवक, मानसी-तनुजा-वित्तजा सेवा करनेवाले भी सब छोटे हो जाते हैं।

पहला भेद गरुड और भुशुंडि का लें। गरुड को मोह है, संशय है। विष्णु ने पीठ पर बैठने का बंद नहीं किया है फ़िर भी उसके अनुभव में नहीं आते। हृदय में संशय है अत: हरि अनुभव में नहीं आते। कागभुशुंडि के हृदय में साक्षात् बालरूप में हरि बिराजमान है। वे कभी भी हरि से अलग नहीं हुए। या एक दूसरा भेद कहूं। गरुड की पीठ पर हरि बैठे और भुशुंडि के हृदय में हरि बसे। इतना फरक है। दोनों हरिभक्त पर दोनों के आवास अलग। एक वैकुंठबासी और एक नीलगिरिबासी। आगे और भेद। एक गगनगामी पर कौआ बहुत गगनगामी न कहलाए। उसकी कविता गगन को चीरकर बह जाय। अत: मैंने इस काग को देहलीज से अंबर कहा। काग बहुत ऊपर नहीं उड़ता। पर उसकी कविता आकाश को पार कर जाय पर यदि अहंकार में उडे नहीं, अहंकार में फूला न समाय तो। कौआ उड़े तो बहुत दूर न जाय। काग दूर होता ही नहीं, गरुड होता है। एक और भेद। गरुड पंख पसारे तो सामवेद निकले और कागभुशुंडि पंख पसारे तो चौपाई निकले। एक दूसरा सामवेद शुरू हो जाय। वैकुंठवाले को धरती पर आना पड़ा। पर काग कहे, 'मारुं वनरावन छे रुडुं, वैकुंठ नहीं रे आवुं।' गरुड तुझे तेरा पूरा राज्य दे दिया। हमें तो प्यारा हमारा वतन। मैं आगे गाऊं-

मारुं तलगाजरडुं मारे रुडुं रे, वृंदावन नहीं रे आवुं।

पर जो अपना भूल न देखें फ़िर वह चाहे उपर की उड़ान भरे मेरे बाप, आख़िर जोड़ में शून्य! गरुड गगनबासी है, कागऋषि हमारे बीच रहता है। यह भेद है। दोनों को आंख है। भुशुंडि को दो आंखें थी अब एक हो गई। गरुड की दो ही रही। कई व्यक्ति ज्यादा उपर उड़ान भरें तो द्वैत ही बने रहे, अद्वैत होते ही नहीं। कई खेत में बैठकर

अद्वैत बना लेते हैं। एक आंख मानी अद्वैत की महिमा है। यह वही कागभुशुंडि है जिसे हरि अलग दिखता था, हर अलग दिखता था। शंकर मेरा इष्टदेव तो मैं हरि को न मानूं। शंकर ने शाप दिया। गुरु अपराध किया तब उसे दो दिखते थे पर काग बनने के बाद दो दिखते बंद हो गए। एक दृष्टि का यह प्रमाण है कि आप के विरुद्ध चाहे कितने विरोध आए पर उसके सामने आप को विरोध करना सूझे ही नहीं तब समझना हम कागऋषि बनते जा रहे हैं।

किस पर पथ्थर फैंकूं, 'कैसर' कौन पराया है।
शिश महल में हर एक चेहरा मुझ-सा लगता है।

एकत्व का सर्जन भुशुंडि की महत्ता है। गरुड में अभी द्वैत है और अद्वैत अभी बन रहा है। एक और भेद- गरुड राजा है, काग इनकी प्रजा है। ऐसी प्रजा कि राजा को झुकना पड़ा। इसने दिग्गज को झुकाए बागबापू ने! बड़े-बड़े मुकुट झुकते थे! यह जरा भी अतिशयोक्ति नहीं है। भुशुंडि वक्ता है, गरुड श्रोता है। दोनों को आंख है, चोंच है। दोनों को पंख है। फ़िर भी गरुड में भक्ति है। पर ज्ञान की प्रधानता है। भुशुंडि में अद्भुत ज्ञान है। पर भक्ति की प्रधानता है। इसीसे यह कागऋषि अलग पड़ता है। गरुड का रंग कैसा होगा? पता नहीं। पर काला तो नहीं है। उजला ही होगा। परंतु उसके अंदर मोह का कालापन है। यह अंदर-बाहर काला। कोई भेद नहीं है। गरुड बहुत बड़ी गति का प्रतीक है। कागभुशुंडि जीवन की भीतरी प्रगति का प्रतीक है। 'रामायण' के आधार पर कहूं तो गरुड विष्णु को अपनी पीठ पर बिठाकर ब्रह्मांड में परिभ्रमण कर सकता है। भुशुंडिजी अंतर्मुख होकर भगवान के मुख में जाकर अनेक ब्रह्मांडों तक दर्शन करता है। पूरी आंतर्यात्रा का प्रतीक कागभुशुंडि है। गरुड बहिर्यात्रा का प्रतीक है। एक भगवान का वाहन है, एक भगवान का वाहक है। भगवद्कथा को घर-घर पहुंचाता है। वह विष्णुवाहक नहीं है, विष्णु की कथा का वाहक है। वह विष्णु को नहीं, विष्णुकथा को जन-जन तक पहुंचाता है। भुशुंडि का कार्य ज्यादा उदार है।

एक बात समझ लें। ओशो कहते थे, गुरु मारग नहीं बताता, वे हमें आंखें देते हैं कि तू अपने आप ढूंढ़ ले। यह बहुत बड़ा सूत्र है। मेरा तुलसी यही कहता है। गुरु कहे, मुझे भजन करने दे। मैं तुझे आंख दे दूं। तू अपने आप ढूंढ़ ले। गुरु आंख दे, हमें मारग ढूंढ़ लेना है। आंख मिले तो मारग मिले। गुरु ऐसी आंख दे कि हमें प्रेम से बुलाए तो भी प्यारा लगे। एक शे'र सुनिए। यहां तो दोहें गाने चाहिए। शे'र तो यहां एन.आर.आई है। भीखुदानभाई, जहां बैठता हूं, दोहे शुरू हो जाते हैं! जहां देखे वहीं काग ही काग है! गरुड गुम हो गए! वैकुंठ में जाकर सो गए। मर्हूम अहमद फ़राज़साहब का शे'र सुनिए-

वो जानता था कि मुझे उसका मुस्कुराना पसंद है 'फ़राज़।'
इस लिए दर्द भी देता था तो मुस्कुराके देता था।।

यह गुरु है, परमात्मा है। यह आश्रयदाता है। शिकायतों का स्थान ही न रहे। पीड़ा दे तो भी मुस्कराके दे। पीड़ा हरे तो भी मुस्कराके। कागबापू के खेत में सब इकठ्ठे हुए हैं। इतने सारस्वत, विद्वान, आइमाँ। कुछ उज्ज्वल दिख रहा है। नयी दिशा खुलेगी।

'मानस' में कुल तेईस बार 'काग' शब्द का प्रयोग हुआ है। इसमें भुशुंडि के संकेत के साथ 'काग' शब्द प्रयुक्त हुआ है। वहां कुछ अलग आकाश खुलता है। उसके सामने जो कौआ पक्षी है उसके लक्षण है, उसकी आलोचना भी 'मानस' ने की है! जिसका एक दृष्टांत मैंने दिया था। आप काग को प्रेम से सुवर्ण पिंजर में रखे फ़िर भी वह निरामिष न हो सके। यह काग प्रकृति है। इस बापू की सरनेइम 'काग' है, काग की प्रकृति नहीं है। भुशुंडि की देह काग की, आत्मा हंस की है। इसे बराबर समझ लें। बाकी पक्षी के रूप में काग के कुलक्षणों की चर्चा भी हुई है। शगुन भी लेते हैं। इसका दूसरा पक्ष भी 'मानस' ने दिया है।

अति खल जे बिषई बग कागा।
एहि सर निकट न जाहिं अभागा।।

तुलसीजी कहे, कागभुशुंडि नीलगिरि की ओर का निवासी। भगतबापू, यह मजादर का बापू यह ऐसा काग कि वह मानसरोवर नहीं गया पर मानसरोवगर रूपी 'रामचरित मानस' संपूर्ण अपने भीतर रखा! क्योंकि भीतर हंस का था, सरनेम 'काग' थी। 'रामायण' में लिखा है कि दोनों अत्यंत विषयी, खल है। दो पक्षीओं के नाम लिए, बगुला और कौआ। दोनों की आलोचना की। बगुला को अति खल कहा। उसमें अति लुच्चाई होती है। हमें ऐसा लगे कि ध्यान धरता है पर वह मच्छी की राह देखता है! मेरी और आप की सभ्यता बाप! अवसर नहीं मिलता तब तक ही सभ्यता होती है। वक्त आने पर हम एक मिनट में सभ्यता का त्याग कर फ़िर मूल स्वभाव में चले जाते हैं! रजोगुणी आदमी चाहे जितना सत्त्वगुण का नाटक करे, उसका रजोगुण रजोगुण में ही चोंच मारेगा! क्योंकि गुण गुण में खेलते हैं। ठाकुर रामकृष्ण यों कहते थे कि बिल्ली को गंगाजल में स्नान कराइए, पीतांबरी पोषाक पहनाइए, भाल पर कस्तुरी तिलक कीजिए, छोटे मणि की माला पहनाइए, चारों पैरों में सुवर्ण, छोटी पायल पहनाइए, बाजूबंद पहनाइए, सुवर्ण सिंहासन पर बिठाइए, चांदी के कटोरे में गाढ़ा दूध दे, बिल्ली की आरती उतारे, स्तोत्र गान करे। बिल्ली की आरती करने के बाद एक ही स्तोत्र गाए। चलो गाईए-

में एक बिलाडी पाळी छे,
ए रंगे बहु रूपाळी छे।

बिल्ली मानी तृष्णा। तृष्णा का रंग सुंदर होता है। भगतबापू कहते हैं, तृष्णाबाई को जोबन आया। तृष्णा बढ़ती ही जाती है। पुत्रेषणा, वित्तेषणा और लोकेषणा ये तीन प्रकार की एषणा हैं। बिल्ली को तृष्णा कहता हूं। वह रंग से सुंदर होती है। बिल्ली कहां तक बैठी रहे? जब तक चूहे को देखा नहीं है! चूहे को देखे तो एक मिनट में उसकी सभ्यता खत्म! दौड़कर चूहे पर छलांग लगाए। हमारी सभ्यता का भी ऐसा ही हुआ है। हम बहुत अच्छे लगते हैं। पर जब अपने स्वार्थ, हेतु और हमारी प्रकृति साथ रहती है तब सभ्यता चुक कर जहां थे वहीं पहुंच जाते हैं! तुलसी कहते हैं कि जो अतिशय खल है वो बगुले हैं। काग विषयी है। जो अतिशय विषयी होगा,। अतिशय लुच्चाई जिसमें भरी होगी वह 'रामचरित मानस' के पास नहीं पहुंचेंगे। यही एक प्रमाण। यह मानुष मानसरोवर तक पहुंचा। 'रामचरित मानस' के प्रसंगों पर कितने भजन लिखे हैं! कैसे-कैसे नए अर्थ उन्होंने 'रामचरित' के दिए!

भगतबापू की अद्‌भुत पदरचनाएं! वाल्मीकि का 'रामायण' कठिन; फ़िर तुलसी लोकहृदय तक पहुंचे। कागबापू ने लोकभजन रच-रचकर लोकहृदय के आरपार कर डाला। जब अपने ही पद और भजन लेकर कहते, 'रामायण' कहते तब एक अनोखा ही माहौल खड़ा हो जाता। उनके खेत में रामकथा होनी ही चाहिए। और हो रही है। यदि न होती तो साढ़े तीन पाले के मन में रह जाता कि न हुई! मुझे तो बेशक होता कि पूरी दुनिया में गाया और ऐसा एक 'रामायण'मर्मी काग के यहां कथा न हुई! मैंने कागभुशुंडि के यहां हिमालय में गाया। 'मानस' तक पहुंचे अत: भगतबापू विषयी नहीं, ऐसा सिद्ध होता है। विषय पर ही रहते, मुद्दे पर ही रहे। विषयांतर न हो भगतबापू की साधु लेखिनी की महिमा कुछ ओर ही है। कवि जब संपूर्ण विराट दर्शन करे कि यह सब ब्रह्ममय है और खुद को कुछ नहीं ऐसा अनुभव करे तब कविता का प्रथम जल निकले ऐसा 'रामायण' में कहा जाता है। कविता की गंगा कहां से निकले? व्यवस्था भी हो सके! पर ये जो कविताएं उतरी, वेद उतरे, वाल्मीकि उतरे, 'मानस' उतरा, कितने नाम लूं? ये कविता सरिताएं उतरी। इसके मूल में समस्त जगत को विराट रूप में देखा है। उसे ऐसा लगा है कि मैं इस विराट के आगे शून्य हूं। मैं कुछ भी नहीं हूं। तब पहली कविता का स्रोत फूटता है। वह कविता जगत पूज्य बनती है। वह कविता लोकप्रिय भी बने और लोकपूज्य भी बने। इतना ही नहीं, लोकप्राप्य भी बने। इस खेत में ऐसा माहौल बना।

तो 'मानस-कागऋषि'; मूल में यह बात थी कि ईश्वर कहीं भी जाता नहीं, कहीं आता नहीं। अपने कुसंग के कारण ही पास का दिखता नहीं। बाकी 'हरि व्यापक सर्वत्र समाना।' और मुझे पता है, जिसे भजन करना हो, साधना करनी हो, जिसे अयोध्या में गुम हुए राम को चित्रकूट में पाना हो, उसे अवध से चित्रकूट की यात्रा करनी पड़ेगी। इस यात्रा में तुलसीजी ने पांच विघ्न बताए हैं। यह प्रत्येक भजनानंदी के मार्ग में आते विघ्न है। यह प्रत्येक साधना के मार्ग में आते विघ्न है। यह प्रत्येक साधक के मार्ग के विघ्न है। भरतजी रामजी को मिलने के लिए अयोध्या से निकले और उन्होंने संकल्प किया कि रामजी नंगे पांव चलकर गए हैं तो मैं भी ऐसे ही चित्रकूट जाऊंगा। यह देखकर अयोध्या का समाज आदर के कारण नीचे चलने लगा। हजारों लोग पैदल चलने लगे। माँ कौशल्या ने अपना वरद हस्त भरतके सिर पर रखकर कहा, 'भाई देख, सभी पैदल चलने लगे हैं। अपनी प्रजा है। हमारी जिम्मेवारी है। तू रथ में बैठ जा।' भरतजी ने फ़िर सब का विचार कर रथ में बैठना स्वीकार किया। पर भरतजी का नियम टूटा। बाप, मुझे इतना ही कहना है कि अयोध्या में से गुम हुए राम को चित्रकूट में पुन: पाना हो तो पहला विघ्न आयेगा। हम कोइ ऐसा नियम लेंगे तो टूटेगा। हरिप्राप्ति का नियम गुप्त रखिए। हमारे नियम, व्रत की दूसरों को ख़बर होती है तो लोग तोड़ने का सभी प्रयत्न करेंगे अनुमति से, विवेक से, तर्क से! अत: पांच माला फेरते हो न तो नियम प्रगट मत करना। पर हमारी तकलीफ़ यह है कि नियम गुप्त रखें तो लिज्जत न रहे! हमने अपवास रखा हो तो दूसरों को थोड़ा पता तो लगना ही चाहिए!

दूसरा विघ्न; शृंगबेरपुर में भरत का समाज पहुंचा तब भीलों ने भरत के प्रति गलतफहमी की। यह कैसा रामभगत जिसके करण राम को बन में जाना पड़ा! हम इसे खत्म कर देंगे! मेरी व्यासपीठ इसका अर्थ यह करती है कि हम जब हरि को खोजने चित्रकूट जाते हैं तब विघ्न आते हैं। बीच का समाज गलतफहमी करता है। परंतु भरत की साधना का पंथ एकदम पक्का था अत: गलतफहमी करनेवाला भील समाज उसका सहयोगी बना। हमारा रास्ता पक्का हो न साहब, तो गलतफहमी में रहनेवालों में जब समझ आयेगी तब आप के साथ जुड़ जायेंगे। अपनी भजनयात्रा का यह दूसरा विघ्न है। समाज की गलतफहमी। भरद्वाजजी के आश्रम में आए तब रिद्धि-सिद्धि प्रगट हुई और ऐश्वर्य का सर्जन हुआ। हर प्रकार के भोग प्रगट हुए। इस मजादर के खेत में यह सब हुआ यह रिद्धि-सिद्धि नहीं तो क्या? सभी खुश है। जल्सा करते हैं!

बिनती करता हूं, यहां इतने सब इकठ्ठे हुए हैं तो गंदगी मत करना। स्वच्छता अभियान चल रहा है। हम छोट थे तब प्रति सप्ताह तलगाजरडा के लड़के वरिष्ठजनों के कहने से सफ़ाई करते थे। शाहपुर पढ़ाई करते थे तब शौचालय साफ़ करते थे। पानी भरना, कमरों की सफ़ाई, सब्जी काटना, रोटी बेलनी यह सब करते थे, यार! अभी भी मैं कर सकता हूं। रोटी बेलनी कहे तो बेल डालूं! पर मुझे पता है, आप मुझे नहीं कहेंगे! मैंने एक दिन शीरा बनाया; शीरा तो नहीं हुआ, पतंग का गम बन गया! एक बार उडदिये की चोरी की थी। मैंने नहीं चुराया था, मैंने अपनी रूम में रखा था। स्वच्छता का मेरा पुराना स्वभाव है। स्वयंसेवक बनकर जितनी स्वच्छता रख सके, रखिए। प्लास्टिक भी यहां-वहां मत फेंकिए। पशु प्लास्टिक न खा जाय ऐसा ध्यान रखे तो यह बड़ा राष्ट्रीय कार्य माना जाय।

बाप, रिद्धि-सिद्धि तीसरा विघ्न था। अयोध्या की जनता भरद्वाजजी की शरण में आई। रिद्धि-सिद्धि ऐश्वर्य, सुगंधित मालाएं, सुगंध, चंदन का रंगराग है। तुलसी मर्यादा का संत है। फ़िर कहा, 'बनितादिक भोगा।' तमाम भोग वहां उपलब्ध थे। अयोध्या से राम निकल गए थे। उन्हें चित्रकूट में पानेवाली यह अयोध्या रिद्धि-सिद्धि में फंस गई। तुलसी ने लिखा है, सभी उसमें डूब गए। पर संपत्तिरूपी चकवी भरतरूपी चकवे पर प्रभाव नहीं डाल सकी। भरतरूपी चकवे ने संपत्तिरूपी चकवी पर नजर भी नहीं डाली। संत समृद्धि की चपट में नहीं आया।

चौथा विघ्न आता है इन्द्र आदि देवताओं द्वारा। इन्द्र को लगा, यह भरत राम तक पहुंचा तो राम को अयोध्या ले आयेगा। फ़िर रावण को कौन मारेंगे? फ़िर हमारे भोग-विलास खतरें में पड़ जायेंगे! स्वार्थी देवताओं ने योजना बनाई। भरत-राम मिलाप न हो ऐसा षडयंत्र रचा है। यह जीव हरि को मिल न सके ऐसे सुरी विघ्न आते हैं। भरत की बुद्धि फेरने के लिए सरस्वती को निमंत्रण दिया। सरस्वती ने कहा, 'मैं मंथरा की मति फेर सकूं पर संत की नहीं।' इस दैवी विघ्न में से संत निकला और अब चित्रकूट पहुंचे हैं। वहां साधु-संत आए हैं। सत्संग शुरू हुआ है। आकाश में धूल उड़ने लगी। पशु-पक्षी भागकर चित्रकूट के आश्रम में आश्रय लेने लगे। भील दौड़ते-दौड़ते आए कि भगवन्, अयोध्या के राजकुमार भरत और शत्रुघ्नजी चतुरंगिनी सेना लेकर चित्रकूट आ रहे हैं अत: पशु-पक्षी भयभीत है, धूल उड रही है। 'भरत आ रहे हैं', ऐसा रामजी ने सुना तो प्रत्यक्ष दिखते हैं ऐसा तुलसीदासजी ने लिखा 'सुनत सुमंगल बेन।' ऐसे मंगल बचन सुने तो प्रभु पर प्रतिक्रिया क्या हुई? 'मन प्रमोद', परमानंद परमात्मा में विशेष मोद उत्पन्न हुआ। पर दूसरे ही क्षण प्रभु विषाद और विचार में पड़ गए! भगवान के हृदय में कुछ पीड़ा है। वह सतत राम के सामने देखनेवाले लक्ष्मण को, जाग्रत महापुरुष को दिखाई दिया। लक्ष्मणजी खड़े हो गए! लक्ष्मण के प्रति प्रेम अब प्रदर्शित होता है, 'लक्ष्मण, मुझे तेरी सौगंद, पिताजी की आन; पवित्र और सुबंधु भरत जैसा इस विश्व में दूसरा कोई नहीं।' मैं आप को इतना कहना चाहता हूं कि हम जब बिलकुल चित्रकूट के निकट पहुंचे तब यह पांचवां विघ्न आता है। हमारे अपने घर की व्यक्ति मार डालने तक की बात करे! भावनगर के नाझिर के शब्द हैं-

पथिक तुं चेतजे, पथना सहारा पण दगो देशे,
धरीने रूप मंज़िलनुं उतारा पण दगो देशे।

जिसे भजन करना हो, गुम हुए हरि को चित्रकूटरूपी चित्त में खोजना हो उन्हें पांच विघ्नों के लिए तैयार रहना पड़ेगा। ऐसा 'रामायण' में है। मैं आप को आश्वासन देता हूं, काल और घटना संदर्भ में कि जब बिलकुल निकट की व्यक्ति आप की हत्या तक पहुंचे उस दिन भरोसा रखना, अब राम बहुत निकट है। पर उस समय टिके रहिए। यहां गुरुकृपा काम में आती है। नहीं तो आख़िरी घड़ी आदमी खत्म हो जाय। आप के गुरुदेव महादेव हो या जगदंबा, उनके चरण में दृढ़ भरोसा रखना। उस दिन वह सहाय करेगा, बाकी सब पलायन हो जायेंगे!

एक बात बीच में बता दूं। वो समय गया, अब तलवारों की बातें नहीं करनी है। तलवार को गला दे, तंबूरे के तार बना दे। यह देश, विश्व शस्त्रमुक्त होना चाहिए। सत्य, प्रेम, करुणा का साम्राज्य जन-जन में स्थापित होना चाहिए। साहब, हाथ में पेन हो तो लकीरें खींचने की इच्छा होती है। छूरा जेब में हो, तो उपयोग की इच्छा होती है। उसमें से बनाईए तंबूरे के तार-

तारां सुंदर वाजिंत्रो तुं जगने दई देजे,
अने लई लेजे तारो तंबूरो एकलो।

इस भूमि का कवि ऐसा कहता हो तो छोटे-छोटे सेढ़ों के लिए झगडे छोड़ देना। छोटे-बड़े केस कोर्ट

में हो तो जल्दी वापस खींच लीजियेगा। आप इतना तलगाजरडा को नहीं देंगे? पुन: कहता हूं, मैं दाने मांगने नहीं, दाने बोने आया हूं। इतना करे तो समाज को कितना बड़ा परिणाम दे सकते हैं! मुझे कई बार कहते हैं कि आप इतना श्रम करते हैं, परिणाम क्या मिलता है? मुझे पता है, आप का तर्क वाजिब है। मकरंदभाई के शब्द हैं-

वेर्यां में बीज अहीं छुट्टे हाथे ते
हवे वादळ जाणे ने वसुंधरा।

मेरा बोआई के बीज कमज़ोर नहीं है। अब बादल और बसुंधरा जाने। तुलसी की चौपाई की अद्‌भुत बोआई के बीज! फसल जरूर होगी। मेरी प्रिय पंक्तियां-

चिरंजीवीओने धरतीना छेडा दई देजे
अने करी लेजे काची मढुली एकलो!
चौद रत्नो मंथननां विष्णुने दई देजे
अने शिव थाजे सागर पीनार एकलो।

मेरे पंथक ने कौन से चौदह रत्न दिए यह कहना है। एक तो कागबापू। मेरी तलगाजरडी आंख में यह सब से प्यारा है। 'भाया तारा भाग के दुला जेवा दीकरा!' इस पंथक से निकला साहित्य जगत का यह रत्न है। वसुधा वंध्या नहीं है। सभी जगह रत्न होंगे। 'बहुरत्ना वसुंधरा।'

'मानस-कागऋषि' के संदर्भ में ऐसी बातें कर रहे हैं। कल संक्षेप में राम जन्म उत्सव किया। कैकेयी ने पुत्र को जन्म दिया। सुमित्रा ने दो पुत्रों को जन्म दिया। समय होने पर नामसंस्करण हुआ। यज्ञोपवित संस्कार हुआ। गुरु आश्रम में पढ़ाई के लिए गये। अल्पकाल में विद्या प्राप्त की। आगे विश्वामित्रजी पधारते हैं। राम को अपने साथ ले जाने की माग करते हैं। दशरथजी शुरूरात में ना कहते हैं। पर वशिष्ठजी ने कहा, ये चारों पुत्र यज्ञ की प्रसादीरूप मिले हैं तो यज्ञ की रक्षा हेतु भेजना आप का फर्ज है।

राम-लक्ष्मण ऋषि के साथ जाते हैं। ताड़का आती है। प्रभु ने अवतार कार्य का आरंभ किया है। राक्षसी को मार डाली। जहां से विकार प्रगट होते हैं इसकी भूमिका को राम ने प्रथम नष्ट किया है। उद्धार किया है। सुबह यज्ञ का आरंभ हुआ। बिना धार का बाण मारकर मारीच को लंका के समुद्र तट पर फेंक दिया। सुबाहु को अग्निबाण मारकर भस्म किया। विश्वामित्र का दो अन्य यज्ञ की ओर सूचन हुआ। एक अहल्या का प्रतीक्षायज्ञ और जनक का धनुषयज्ञ। समाज की अहल्याओं को पदयात्रा में उद्धार करने प्रभु पैदल यात्रा करते हैं। आगे एक आश्रम दिखा। सन्नाटा है! कोई पथ्थरदेह पड़ा है! विश्वामित्र ने गौतम-अहल्या की कथा बताई। रामजी ने चरणकमल से कृपा की। समाज के सभी क्षेत्र जो हम तक नहीं आ सकते उसके पास जाने का संकल्प लिया। अहल्या नवजीवन प्राप्त कर पतिलोक में गए हैं। फ़िर यात्रा आगे बढ़ी। जनकपुर पहुंचे। स्वागत हुआ। विदेहराज जनक राम के रूप में डूबे हैं! 'सुंदर सदन' में आवास दिया।

राम-लक्ष्मण शाम को नगरदर्शन हेतु निकले हैं। समस्त जनकपुर राम के नामरूप में डूबा हैं। दूसरे दिन सुबह पुष्पवाटिका में पुष्प लेने निकले हैं। वहां सीता-राम का प्रथम मिलन होता है। भगवान राम ने अपने कलेजे के कागज़ पर सीताजी का चित्र अंकित कर लिया है। जानकीजी भवानी के मंदिर में जाकर गौरी की स्तुति करती है तब जगदंबा बोली। जानकी स्तुति करे और भवानी न बोले? अरे बोले! हमारी बौद्धिक्ता स्वीकारेगी नहीं। विनोबाजी अंत तक कहते कि मैं पंढरपुर में विठोबा का दर्शन करता हूं तब मुझे लगता है मूर्ति मेरे समाने हंसती है, बोलती है। विनोबाजी केवल संवेदनशील नहीं थे। प्रज्ञावान पुरुष भी थे। मेरी दृष्टि से यह महामुनि यों कहे कि पंढरपुर की मूर्ति बोलती है तो बोले ही। क्यों न बोले? हमारे लिए प्रश्न है! पिता-पुत्र नहीं बोलते! भाई-भाई नहीं बोलते! पडौसी-पडौसी नहीं बोलते! जानकीजी को भवानी का आशीर्वाद मिला।

'जानकी, तेरे मन में जो सांवरा बस गया है वह तुझे मिलेगा।' दूसरा दिन पूरा हुआ। रात बीत गई। धनुषयज्ञ का दिन आया। सभी राजा-महाराजा आ गए हैं। शंखनाद हुआ। एक के बाद एक राजा उठने लगे। विफल हुए। क्योंकि कोई भी गुरु को साथ में लाया नहीं था। राम के साथ उनका गुरु है, तो वही धनुष तोडेंगे। गुरुकृपा बिना अहंकार नहीं टूटता।

सभी राजा विफल गए तब जनक जैसे परमज्ञानी पुरुष विचलित हुए हैं। जनकजी आक्रोश में बोले कि 'हे खंड-खंड से आए राजाओं, एक बात सुन लो। यह धरती वीरविहीन हो गई है! सुमित्रापुत्र लक्ष्मण खड़ा हुआ! इतने में विश्वामित्र का दायां हाथ उपर उठा है। तपस्वी हाथ राम की पीठ पर फिरा। और गुरु का भी विवेक देखिए! कहे, राम, बाप! शिवधनुष को तोड़ डालो। क्यों? राजाओं को दिखाने के लिए? नहीं। जानकी से ब्याह करने के लिए? नहीं। इतने बड़े ज्ञानी को परिताप हुआ और उनके संताप को तोड़ने के लिए धनुष तोड़ना है। कितना हल्का कर दिया! राम नीचे उतरे, शिवधनुष की परिकम्मा की। किसीको पता नहीं चला कि धनुष कैसे ऊंचा हुआ, चढ़ा, कड़ाका हुआ! किसीको होश नहीं रहा! तुलसी ने घोषणा की-

तेहि छन राम मध्य धनु तोरा।
भरे भुवन धुनि घोर कठोरा।।

जयजयकार हुआ है। सीताजी वरमाला लेकर रामजी के सन्मुख आए हैं। आनंद छा गया। अभिमानी राजा बैचेन हो गए। परशुराम आए। बोध हुआ। परशुराम अवकाश प्राप्त करते हैं।

दूत अयोध्या गए। दशरथजी बारात लेकर आए। ब्याह का मुहूर्त आया। माघ शुक्ल पक्ष पांचवीं तिथि, गोरज बेला। लोकरीति-वेदरीति शुरू होती है। जानकी-राम विवाह संपन्न हुआ। वशिष्ठजी ने जनकजी से कहा कि आप की एक कन्या ऊर्मिला और छोटे भाई कुशध्वज की दो पुत्रियां श्रुतकीर्ति और मांडवी तीनों का ब्याह इसी मंडप में हो जाय, बाप! जनकजी प्रसन्न हुए। इस तरह चारों भाईओं का ब्याह हुआ। फ़िर रास्ते में विश्राम करते-करते शुभ दिन पर बारात अयोध्या पहुंची। दिन बीतने लगे। सब को बिदाई दी। आख़िर में विश्वामित्र को बिदा दी। संत की बिदा पर राजपरिवार बेचैन है। साधुपुरुष को किसी परिवार के प्रसंग में आनंदवृद्धि हेतु और बल प्रदान हो तो जाना चाहिए। पर कार्य पूर्ण होने के बाद वहां रुकना नहीं चाहिए। अपने भजन के लिए निकल जाना चाहिए। विश्वामित्र ने बिदा ली। अपनी तपस्थली पहुंचे। तुलसी कहे, राम-चरित्र सागर जैसा। इसका पार कौन पा सके? मेरी वाणी को पवित्र करने के लिए मैंने वर्णन किया। यहां 'बालकांड' पूरा होता है।

हमें यही समझना है कि पूर्ण परमात्मा हमारे अनुभव में नहीं आता; अपने दिल की अयोध्या छोड़कर कहीं चित्रकूट में चला जाता है; इसका कारण यह है कि हम कुसंग में लिपटे रहते हैं। इसकी जगह सत्संग स्थापित हो जाय तो वही राम पुन: दिखाई दे। रामकथा सत्संग है। वहां राम और सीता विहार करते अपने अनुभव में आए। हम दु:खी क्यों है? कहीं अपना कुसंग है। हमारे संशय हमें अपने हरि से दूर रखते हैं।

मानस-कागऋषि
:: ८ ::

कागबापू दृष्टिवाले, पंखवाले और एक ऊंचाईवाले कवि है

'मानस-कागऋषि' के विचारों को केन्द्र में रखकर भगतबापू के स्मरण में रामकथा के इस प्रेमयज्ञ में विचारों की, वाणी की, मौन सद्भाव की हृदय में घूमते एकता के विचार की, नापसंद चीजों को फेंक देने की सद्वृत्ति लेकर यहां सब आहुति दे रहे हैं। ये साढ़े तीन पाले; राजस्थान, हरियाणा, मध्य प्रदेश की अलग-अलग पघड़ियां। सब की अपनी-अपनी मौलिक वेशभूषा, अपने मौलिक भाव लेकर आए हैं। सब का अभिवादन। घणी खम्मा, बाप! ये जोगमाया कितनी प्रसन्न है! यह दाढीवाला बापू कितना प्रसन्न होगा! एक सुंदर घटना हो रही है। कल यह घटना विराम की ओर गति करेगी। भगतबापू को लेकर कितकितने सर्जकों ने अपनी-अपनी बात कही है! सभी का कागबापू के प्रति अहोभाव है।

एक चिठ्ठी ऐसी आई कि 'आपने चौदह रत्नों की बात की थी। उसे बिना गिनाए मत जाईये!' समुद्र मंथन देवता-असुरों ने मिलकर किया तब चौदह रत्न निकले थे। एक होकर मथते तो चौदह लाख निकलते। परस्पर मतभेद थे अत: चौदह ही निकले। नहीं तो समुद्र तो रत्नों की खदान है। अनगिनत रत्न हैं। समग्र देश, गुजरात, पृथ्वी में से ले, गुरुकृपा से अपनी हैसियत बढ़ती जाय, साहब! एक एक नाम बोलूं तो उसमें अन्य सभी रत्न आ जाते हैं। पुन: कहता हूं, पूरी सृष्टि रत्नों से भरी है। यदि कोई रह जाय तो आप बढ़ाईए। अब रत्नों की शुरूआत कहां से करूं? पहला रत्न पूजनीया आइमाँ सोनबाइमाँ; उनमें सभी माँ आ गई। इस एक में शक्ति मात्र है, ऊर्जामात्र है। आदि अंबा हमने देखी नहीं है। हमारे सामने कोई तो होनी चाहिए न? ओल इन वन। साढ़े तीन पालेवालों को कोई हर्ज तो नहीं है न? 'तालाब के पानी एक होकर रहना।' मुझे अति पसंद बापू की पंक्ति 'जो भेळा नहीं रहो अने बधुं डहोळशो, छीछरा थशो तो हंस किनारा छोडी देशे। पछी बगलानी साथे बेठकुं करवी पडशे!' चारण को तो बारबार जनम लेना चाहिए। मोक्ष मागे वो चारण नहीं। काग मोक्षमार्गी नहीं है। इसी से हम उसे पितृ मानकर श्राद्ध डालते हैं। उसे शाश्वती चाहिए। वह वापिस आना चाहता है। आना ही चाहिए। नरसिंह मेहता-

हरिना जन तो मुक्ति न मागे,
मागे जनमजनम अवतार रे...

मैं तो मोक्षमार्गी हूं ही नहीं। यदि तेरे यहां व्यवस्था है तो तलगाजरडा में जनमना है और न हो तो कानून थोड़ा बदलना। तुझे बहुत ही गाया है। हजारों बार कहा है कि तेरे पास व्यवस्था हो तो उसी सावित्रीमाँ की कूख से जनमना है। इस भीतर को कोई और कूख भाती ही नहीं है। यह मेरी मांग है अस्तित्व के पास। क्यों मोक्ष मागे? जो ऊब गए हो वे मोक्ष की बात करते हैं। मैं मोक्षमार्गी नहीं हूं।

जनम जनम रति राम पद यह बरदान न ग्यान।

हमारा परमसाधु भरत कहे, हमें जनम-जनम रामचरण में रति प्राप्त हो। उन्होंने मोक्ष नहीं मागा -

अरथ न धरम न काम रुचि गति न चहहु निर्बान।।

मोक्ष का किसे पता है? चारणों को बारबार आना चाहिए। चारण समाज के अनेकविध विद्वानों को इस धरती के संस्कार का जतन करने आना चाहिए। सयानों को पुनः पुनः आना चाहिए। इस जगत को आवश्यकता है। कतिल शिफाई का उर्दू शे'र है -

अकेला है हुश्न इतना कायनात में,
कि इन्सान को बार-बार जनम लेना चाहिए।

अर्थ नहीं करूंगा। 'श्रीमद् भागवतजी' में व्यास ने लिखा है। भाष्य क्या करने? जगत जीने जैसा है, आने जैसा है। यदि भगतबापू अभी जीवित होते तो एक भजन लिखते -

सुंदर निसरणी बनीने ऊभा,
चडनारां अमने बहु मळ्यां,

सुंदर दृश्य देखकर उन्हें मौज आती कि हमारे जो मनोरथ थे उनका स्वीकार हुआ है। श्रोता, गायक, प्रेक्षक सभी मिले हैं स्वर्ग में तो मुझे जाना ही नहीं है।

पहला रतन आई सोनल माँ। बापू का बहुत ही पूज्यभाव रहता। उनकी कविताओं और वाणी में बापू का बड़ा समर्पण था। माँ उन्हें भाई कहती, दुलाभाई। वात्सल्य से कहती। माँ जानती थी यह दूसरा रतन है। इसमें कोई कोम, वर्ण या जात नहीं है। रतन को यह कुछ नहीं होता। रतन माने रतन। दूसरा रतन जिनके खेत में बैठे हैं वह भगतबापू, कागबापू। इसमें सभी कवि, सर्जक, शब्दोपासक आ गए। मैं जिम्मेदारी से कहता हूं। मेरा कथन रेकर्ड हो रहा है। सदियों तक रहेगा। यह मेरा व्यक्तिगत मत है। सहमत हो या न हो, सोचियेगा। तीसरा रतन दयानंद सरस्वती। यज्ञ और वेद का प्रचार किया। चौथा रतन श्रीमद् राजचंद्र।

पांचवां रतन, बहुत भाव से कहता हूं जलारामबापा। इसमें सभी भक्त आ गए। राम-नाम जपनेवाले आ गए। छठ्ठा रतन, महात्मागांधी। यह तो समस्त जगत का रतन है। सातवां रतन, दादा मेकरण। अवधूती, रुखड, फक्कड, अलमस्त और बन्दगी सिवा कुछ भी नहीं था ऐसा कच्छ का रतन। इसमें धूनीवाले, कुत्तेवाले, गधेवाले सब आ गए। आठवां रतन हमीरजी गोहिल। हमारा सोमनाथ; अपना जीवन है सोमनाथ। एक ओर द्वारकाधीश, दूसरी ओर सोमतीर्थ। इसमें सब आ गए। नौवां रतन, नरसिंह मेहता; इसमें समस्त गुजराती साहित्य आ गया। इसमें सभी भक्तकवि आ गए। गांधीजी ने इस रतन के मूल्य को समझा। गांधीजी ने इनके एक पद 'वैष्णवजन तो तेने कहिए' को पूरी दुनिया में उजागर किया। यह वैष्णवों की 'भगवद्गीता' है।

दसवां रतन कृष्णकुमारसिंहजी गोहिल। इसमें सभी रजवाडे, क्षत्रिय आ जाते हैं। ग्यारहवां रतन शासकीय क्षेत्र का रतन सर प्रभाशंकर पट्टणी। इसमें दीवान और सभी शासनकीय जगत आ गया। बारहवां रतन झवेरचंद मेघाणी। तेरहवां रतन बजरंगदासबापू। हमारी त्रिसाख का साधु। चौदहवां रतन; नोबेल प्राइज़ के एक समान दावेदार हो तो प्राइज़ के एक समान दावेदार हो तो प्राइज़ को दो हिस्सो में बांटना चाहिए। हमें भी चौदहवें रतन के हिस्से करने होंगे। इस रतन को पकने दें। गायन क्षेत्र में रतन खोजना पड़े। संतवाणी में सबको एक में समा लूं। जगतभर की शूरवीरता, दानशीलता, ईमानदारी, उदारता, संयम माने चौदहवां रतन जोगीदास खुमाण। इसमें सभी शूरवीरता, बलिदान आ गए। मुझे संप्रदाय के महापुरुष भी याद आए; योगीजी महाराज। हम क्यों भेद रखें? मूल वस्तु का जतन होना चाहिए। जिनके नाम रह जाते हैं वे सभी साधु-संत इसमें आ जाते हैं।

यहां हम कागविचार को केन्द्र में रखकर 'मानस' गा रहे हैं। 'मानस' में लगभग तेईस बार 'काग' शब्द है। सोलह बार 'काग' शब्द भुशुंडि की ओर है। छः बार पक्षी के संदर्भ में है। एक बार इन्द्रपुत्र के लिए हैं। काग का पक्षीत्व, हंसत्व और अवगुणों को तुलसी ने गाए हैं। उनमें से एक तत्त्व।

समन अमित उतपात सब भरतचरित जपजाग।
कलि अघ खल अवगुन कथन ते जलमल बग काग।।

तुलसी ने 'मानस' को सरयू नदी कही है। कविता की नदी। वहां पर अनेक पक्षी हो। तीर्थतट पर आदमी जाय, रहे, जपयज्ञ करे। तुलसी कहे, रामकथारूपी सरिता तट पर यज्ञ क्या है? अनेक संतापों को नष्ट करदेनेवाला चरित्र इस कलियुग की इस रामकथारूपी तट पर जपयज्ञ है। भरतचरित्र अनेक उत्पातों का शमन है। कलियुग के जो अमित अवगुण है उसमें नदी के तीन अवगुण बताए; जल-मल, अघ (कचरा) बगुले। तुलसीदासजी ने कहा, कलियुग के दोषों में ये भी तीन में दिखाई देते हैं। कविता का मैल कौन-सा? कलियुग के अमुक दोष यह भी नदी का कचरा है, मैल है। और अवगुण ये काग है। शास्त्रों में काग का चांडाल पक्षी के रूप में भी उल्लेख है। तुलसी ने भी कहा, काग की तीन वस्तु काग के पंख में है, चोंच है और आंख भी है।

अब हम भुशुंडि से उतर मरजाद जायें। कागबापू की चोंच, उनकी नाक, आबरू, यही उनकी चोंच है। उनके समय में उनकी प्रतिष्ठा तोड़ने लेख लिखे गए! कविताएं भी लिखी गई! मैंने सब पढ़ा है। तथाकथित सयानों ने कागज़, कविताएं, अखबारों में लिखा; जो आता रहा पर उनकी नाक, आबरू पर कोई जोखिम नहीं आया। मुझे इसके तीन कारण लगते हैं - जगदंबा पर भरोसा, रामनाम की निष्ठा और मुक्तानंद की कृपा। लोग थक गए पर चोंच वैसी की वैसी रही! समाज ने इन्हें खत्म करने की सभी प्रवृत्तियां की थी! समानधर्मियों ने ऐसा किया है। द्वेष और इर्ष्या समानधर्मी को विशेष सताती है। कविता की आवाज़ के कुछेक दोष है। नाक में से बोलना दोष है। भगतबापू नाक से बोले, मतलब आबरू, इज्जत से बोले। शुक की नाक थी। नाक का संस्कृत में अर्थ होता है स्वर्ग। स्वर्ग माने ऊंचाई। एक अवस्था, स्थिति वही स्वर्ग है। बापू की एक ऊंचाई, अवस्था, महिमा थी। उनके पंख वही उनके दोहे, कविताएं और भजन थे। गांव में कथा कहते थे और केवट प्रसंग में 'पग मने धोवा दो' कागबापू का भजन न गाए तो श्रोताओं की शिकायत रहती कि बापू ने यह हिस्सा उड़ा दिया! लोग यही मानते हैं कि यह 'रामचरित मानस' अंतर्गत है। भीतर तक प्रवेश कर जाना सरल नहीं है। झूठे नेटवर्क से होता है! कागबापू का अपना गुह था, केवट था।

पग तमे धोवा द्यो रघुराय जी...
प्रभु मने शक पड्यो मनमांय,
राम लखमण जानकी ए, तीर गंगाने जाय जी;
नाव मागी नीर तरवा, गुह बोल्यो गम खाय.

'वाल्मीकि रामायण' में यह प्रसंग है ही नहीं। सबका अपना राम होता है। सभी अपने-अपने अंदर के केवट खड़े करते हैं। इसमें सर्जक का विशेष अधिकार है। भगतबापू कहे, 'गुह बोल्यो गम खाय।' यह बात किसी ने नहीं लिखी। मुझे 'रामायण' पर बोलना हो तो संदर्भ आते हैं। पर यहां गम खाना माने क्या? आदमी को सत्य की खबर हो उस समय सत्य का उच्चारण लोकमंगल के हित में न हो तब आदमी अंदर से उत्साह होता है पर उसे दबा दे इसे गम खाना कहते हैं। उर्दू साहित्य में गम माने

दुख, दर्द, पीड़ा। सयाना गम खा जाय पर किसीको पीड़ा न दे। सार्वजनिक क्षेत्र में, खास कर धर्मक्षेत्रों में- आध्यात्मिक क्षेत्र में हो, खास कर एक लेवल के क्षेत्र हैं, इसमें तो आपको बहुत गम खानी पड़े। साहब, समझकर ठग जाना पड़ता है!

रज तमारी कामणगारी, नाव नारी थई जायजी.
तो अमारी रंक जननी आजीविका टळी जाय.
पग मने धोवा द्यो रघुराय.

यह गम खानेवाला गुह भगतबापू का है। और 'रज तमारी कामणगारी अने मारी आजीविका टळी जाय।' यह तुलसी का गुह है। मेरा गुह कैसा है? तलगाजरडा का गुह कैसा है? तुलसी क्या कहता है?

चरन कमल रज कहुँ सबु कहई।
मानुष करनि मूरि कछु अहई।।

रामजी, यह आपकी चरणरज कामणगारी है। जो छूते ही मनुष्य बन प्रकट होती है। यह तुलसीजी का केवट है। अभी तय नहीं हुआ है कि गुह और केवट एक है या दो? प्लीज़, टेल मी। तुलसी भी ज्यादा स्पष्ट नहीं करते। यहां उलझन है। गुह तो राजा था, केवट प्रजा है। सूर्यवंश के साथ मैत्री है। यह सूर्यवंश कहां तक पहुंचा! एक तुच्छ, उपेक्षित, वंचित को भी एक दरज्जा हो तो दशरथजी मैत्री रखते थे। यह रजवाडे का धर्म बताया।

सबका अपना-अपना केवट होता है। गुरुकृपा से मुझे मेरा केवट है। पहले मैंने प्रसंग बहुत बोए हैं। तब मैं कहता था कि भगवान राम केवट को कहते थे कि तू पैर धो ले, हमें देर हो रही है। फ़िर केवट पानी लाया। पर वह तुलसी का केवट था। और मेरा केवट? वह कहता है कि 'भगवान, आप खड़े रहिए। मैं जरा घर होकर आता हूं।' लक्ष्मणजी को गुस्सा आया कि छोटे आदमी को बहुत ऊंचाई दे तो ऐसा ही होता है! पैर धो डाल जल्दी! घर क्यों जाता हैं? तो कहा कि हम शास्त्र नहीं जानते पर इतनी ख़बर है कि कोई मंगलकार्य अकेले नहीं होता। पत्नी, बच्चें साथ में होने चाहिए। यह तलगाजरडा का केवट है। वह सब को ले आया। पत्नी ने पूछा, क्यों? कहा 'भगवान आये हैं। पैर धोने हैं। पत्नी रो पड़ी! कहा, 'सोने की बटलोई होती तो कितना अच्छा रहता। तब केवट ने कहा कि उसमें तो जनकजी ने पैर धोए हैं।' पत्नी ने तांबे के पात्र का पूछा तब केवट ने कहा कि पात्र नहीं, पात्रता की जरूरत है। यहां केवट मुझे शिक्षक लगता है। फ़िर केवट ने कहा कि अपनी रोटी बनाने की लकड़ी की बटलोई है।

केवट जल भर आया। फ़िर बायें हाथ में बटलोई ली, गंगा के पानी से भरी हुई। फ़िर भगवान को कहा इसमें पैर रखिए। आधा बैठा, आधा खड़ा; कोहनी के सहारे बायें हाथ में बटलोई लिए हैं! 'रामायण' में मत ढूंढ़िए, यह तलगाजरडा का केवट है। रामजी ने पैर रखे। पर बिना आधार का केवट हाथ हिलता है और लक्ष्मणजी ने देखा, भगवान हिल रहे हैं। तब बोले, भगवान इसे समझाईए कि पात्र नीचे रखकर करे। भगवान ने भी कहा। तब केवट बोला कि प्रभु, आप को गिरने का ड़र लगता हो तो आप जरा झुककर दो हाथों से मेरा सिर पकड़ लीजिए। केवट ने कैसे भगवान के हाथ अपने सिर पर रखे! कभी भगवान को भी भक्त के सहारे की जरूरत पड़ती है, आधार की जरूरत पड़ती है। भगवान भी कभी अंत:करण शून्य होता है तब उसे किसीकी प्रज्ञा का सहारा लेना पड़ता है।

प्रभु ने कहा, अब नौका में बैठे? केवट ने कहा, आप नीचे पैर न रखियेगा। रेतकण पैर से चिपक जायेंगे। आप मेरे ऊपर से जाय! और नौका में बैठ जाय। वो नीचे सो गया! आप ने बलि के सिर पर पैर रखा। हम तो छोटे आदमी बलि के बकरे बन गए! फ़िर पैर धुल गए। केवट ने कहा, 'भगवन्, वशिष्ठजी ने आप को कल्पसूत्र पढ़ाया होगा? तर्पण कैसे किया जाय यह भी जानते होंगे? तो, मेरे बाप-दादा नहीं रहे तो उनके लिए तर्पण मंत्र लक्ष्मणजी से कहलवाए। बटलोई में जो गंगाजल इकठ्ठा हुआ था वो गंगा में अर्घ्य कर दिया। फ़िर

केवट जमीन पर लेट गया। देहाभिमान अर्पण किया है। सिर पर हाथ रखवाकर अपनी बुद्धि का अहंकार ठाकोरजी को दे दिया है। इसने पितृओं का उद्धार करवाया फ़िर नौका में बिठाए।

अब भगवानजीबापा शर्मा का केवट ले। इस तट से राम-लक्ष्मण-जानकी को नौका में बिठाए और गंगा में नौका बहाई। और पुन: इस ओर लौटाई। राम-लक्ष्मण कुछ नहीं बोले। केवट ने तीन-चार फेरे लगाए। लक्ष्मणजी ने कहा, महाराज, अब हद हो गई! प्रभु ने पूछा, बिना कारण हमें क्यों घूमा रहे हो? केवट ने कहा, हमें चौरासी लाख फेरे घूमाए हैं! हमने कभी फ़रियाद नहीं की।

अभण केवुं याद राखे ने भणेल भूली जाय!

भगतबापू का समाज और राम पर यह कितना बड़ा प्रासादिक प्रहार था! भगवान ने कहा, 'भाई, हम नौका में बैठने के आदी नहीं है। यह तो तलगाजरडा का केवट। भगवान ने कहा, 'हम विश्वामित्रजी के साथ पदयात्रा और रथ में बैठने के आदी है। हम क्षत्रिय मृगया हेतु जाय तो घोड़े पर बैठने के अभ्यस्त हैं। पर नौका में बैठने का हमारा पहला प्रसंग है। तू जिस तरह नौका को मोड़ देकर घूमाता है तो हमें गिरने का ड़र लगता है!' केवट ने कहा, 'प्रभु आप तैरना नहीं जानते?' कहा, नहीं।' लक्ष्मणजी ने कहा, तू ही हाथ पकड़ ले न! केवट ने कहा, महाराज! मैं अदना जीव हूं। मैं हाथ पकडूं और स्वार्थ आए तब कब छोड़ दूं, कुछ कहा न जाय! पर मैंने सुना है कि आप पकड़ना जानते हैं, छोड़ना नहीं जानते। तो आप ही पकड़ लीजिए। जिससे मैं सलामत रहूं। केवट ने पार लगाए। दंडवत् प्रणाम किए। भगवान को लगा, मैंने उसे कुछ नहीं दिया! इसकी तो आजीविका ही इसी पर है। सामान्य आदमी भी बैठता होगा तो कुछ न कुछ देता होगा। मैं तो चौदह भुवन का मालिक, लक्ष्मीपति; पर आज मेरे पास कुछ भी नहीं है, क्या दूं? तुलसी कहते हैं, 'राम के मन की बात जान लेनेवाले जानकीजी ने अपनी मणिमुद्रिका उतार कर दी। जब प्रभु केवट को देते हैं, केवट इन्कार करता है। कहा, प्रभु, आप वापिस आए तब जो प्रसाद आप देंगे, ले लूंगा। उतराई नहीं पर प्रसाद। कागबापू कहते हैं-

नायीनी कदी नायी ल्ये नई, आपणे धंधा भाईजी;
'काग' ल्ये नहीं खारवानी, खारवो उतराई।

मैं आप को यह कहना चाहता था कि 'मानस' की कथा में भगतबापू का पद न गाए तो लोग कहे, यह बात निकाल दी! भगतबापू की लेखिनी, कविता, सर्जन 'मानस' के अंदर प्रविष्ट हो गया है। अत: कहता हूं, काग को पंख है, उज्ज्वल पंख है। दोहा, छंद, समग्र साहित्य उज्ज्वल साहित्य है। काग की आंख मानी दृष्टि, एक विचार। भगतबापू के पास ऐसी बहुत आंख थी। भारत के भविष्य का विज़न उनकी आंख में दिखाई देता है। दृष्टिवाला कवि, पंखवाला कवि और एक अवस्था की ऊंचाईवाला कवि। ऐसे कागबापू के खेत में कथा चल रही है, 'मानस-कागऋषि'। कथा क्रम संक्षेप में कह दूं।

यस्याङ्के च विभाति भूधरसुता देवापगा मस्तके
भाले बालविधुर्गले च गरलं यस्योरसि व्यालराट्।

'अयोध्याकांड' के आरंभ में मंगलाचरण के मंत्र में शिवस्मरण है। पूज्य डोंगरेबाबा से सुना था, 'बालकांड' मानव की बाल्यावस्था है। 'अयोध्याकांड' युवावस्था है। यौवन के प्रारंभ में शंकर को भूलना नहीं चाहिए। महादेव को भूलने पर युवानी भ्रष्ट होते देर नहीं लगती। ऐसा संकेत देने के लिए शिवस्तुति पहले लिखी। अयोध्या के सुखों का वर्णन किया है। अतिवृष्टि अच्छी नहीं है। अति सुख भी अच्छा नहीं। अति सुख बनबास का श्री गणेश है।

राम के राज्याभिषेक का निर्णय हुआ। कैकेयी ने दो वचन मागे। रामजी को चौदह वर्ष का बनवास मिला है। सुमंत के रथ में बैठकर प्रभु यात्रा करते हैं। गंगा तट पर आए। सुमंत कहते हैं, 'पिताजी ने आप के साथ भेजा तब ऐसा कहा था कि चार दिन बन में घूमाकर मेरी दूसरी आज्ञा राम को कहना कि जिन्होंने वन में जाने की आज्ञा दी, वही पिता की दूसरी आज्ञा है कि आप लौट आईए।' राम कहते हैं, 'सुमंतजी, मुझे कहने दीजिए, बाप! इस जगत में धर्म के रास्ते खड़े किए हैं उनमें एक आप का भी नाम है। ऐसे आप मुझे कहेंगे राम, सत्य चुक जा।' इसे धर्म कहते हैं। बाकी सब पंथ है। याद रखिए, धर्म मूल है। डालियों का, पत्तों का महत्त्व है। एक तिनके का भी महत्त्व है। फल और रस आए तो उसका भी महत्त्व है। पर ये सब इनके विभाग है। धर्म तो यह है सत्य, प्रेम, करुणा। हम जब डालियों को धर्म का महत्त्व देते हैं तब दो डालियां इकठ्ठी होती है उसमें से अग्नि निकलता है! चंदन का वृक्ष क्यों न हो? पर ये डालियां जब घिसती है तब अगनज्वाला फूटती है! मूल में आग लगी हो ऐसा कभी देखा नहीं है। धर्म कभी लड़ाई नहीं करता, हिंसा नहीं करता। वह भडके और आग करता ही नहीं। डालियों के घिसने से ही अंदर-अंदर आग होती है।

राम दुनिया में आदर्श क्यों बने? अभी भी गांव-गांव राममंदिर क्यों बनते हैं? डालियां-पत्ते राम को मानते बंद हो गए है। वे तो अपराध करते हैं! जडें तो राममंदिर में, शिवमंदिर में, राधा-कृष्ण के मंदिर में पड़ी है। एक बात तय है साहब, डालियां जड़ों को मिटा नहीं सकती। यदि करने जाय इससे पहले तो टूट जाय। समाज को मेरी प्रार्थना है, बाप! परमात्मा ने आप को जिस मार्ग पर चढ़ाए हो पर जड़ों को भूलना नहीं। भगतबापू मूल में रहे इसीलिए आज पूजे जाते हैं। दंभीओं ने झूठे पंथ खड़े किए! पगदंडी हो तो भी पकड़ रखिएगा। यह चारणी साहित्य कैसे टिका रहा? प्रशंसा के लिए नहीं कहता पर यह मूल नीचे नहीं है, ऊपर है, उर्ध्वमूल है। उसे जहां-तहां से प्रशंसा का पानी पिलाने की जरूरत नहीं है। उस पर जगदंबा सरस्वती की अमीवर्षा है। उसे किसीकी क्या जरूरत है? अच्छा लगता है। यह मानव अवाचक रहा। इस दाढी ने किसीकी दाढी में हाथ नहीं डाला! दाढी तो उनकी ही अच्छी लगे न जो दूसरों की दाढी में हाथ न डाले! यह हमें बहुत निकट पड़े। बाप! इसमें दूसरी डालियां, पत्तों का दोष नहीं है। यह कलि प्रभाव है। यह काल का प्रभाव है। ऐसा होता ही है।

रामजी सुमंतजी को कहते हैं कि ऐसा मूल धरम मेरे सौभाग्य से मेरी परंपरा में मिला है। उसे छोड़ दूं? शीलवान को सहना पड़ता है। तुलसीजी कहते हैं, दशरथजी के प्राण ने महाप्रयाण किया। वशिष्ठ आदि सब आए। यहां भरत को अपशगुन होते हैं। समाचार मिले। तीव्र गति से दोनों भाई पहुंचे। इस ओर भरतजी दौड़ते हुए कौशल्या भवन पहुंचते हैं। पिता के पंचभौतिक शरीर को देखा। पूरा समाज शोकातुर है। फ़िर अनेक सभाएं हुई। राज्य का क्या निर्णय लेना है? सभी ने सर्वानुमति से कहा, भरत राजगद्दी संभाले। भरत ने कहा, बापजी, मैं सत्ता का नहीं, सत् का आदमी हूं। मैं पद का नहीं, पादुका का आदमी हूं। मेरे हित की खातिर चित्रकूट जाना चाहिए। समस्त अयोध्या चित्रकूट जाती है। जनकपुरी भी चित्रकूट पहुंचती है। अनेक सभाओं के बाद आख़िर में भरत कहते हैं, आप के मन की प्रसन्नता अनुसार करेंगे। निर्णय हुआ। भरतजी अयोध्या राज्य का संचालन करे। भरतजी ने हाथ जोड़कर कहा, 'मैं अयोध्या तो जाऊं, पर मुझे कोई आधार दीजिए कि जिसका सेवन कर अवधि पूरी करूं।' समस्त विश्व के लिए महिमावंत प्रसंग। प्रभु ने पादुका दी। भरत ने शिरोधार्य की। दोनों समाज ने बिदा ली। सभी अयोध्या पहुंचे। भरतजी ने शुभ दिन देखकर सिंहासन पर पादुका का स्थापन किया है।

एक दिन भरतजी वशिष्ठजी के आश्रम में पैर पकड़कर चुप हो गए। तब गुरुदेव ने पूछा, 'भरत, क्या है?' कहा, 'आप मुझे आज्ञा दीजिए। मैं शासन करूंगा। पर मैं वल्कल पहन, अयोध्या से बाहर नंदिग्राम में कुटियां बनाकर निवास करूं।' वशिष्ठजी ने कहा, 'भरत, हम शास्त्र लेकर बैठे हैं। शास्त्रों की बातें करते हैं। तू जो कहता है वह शास्त्र का निचोड़ है। जाओ, बाप! पर कौशल्या का दिल दु:खी होगा तो रामभक्ति सफल नहीं होगी। माँ आज्ञा दे तो जाओ।' भरतजी माँ के पास आते हैं। कहा, 'मा रोज तुम्हारे पास आऊंगा, सेवा करूंगा, प्रजा का ध्यान रखूंगा। मैं नंदिग्राम जाऊं?' इतना कहा और भरतजी का देह गिर पड़ा! वशिष्ठजी सावधान करते हैं। निर्णय एक मिनट में लेने का होता है। कई लोग गांधीजी की भूल को बताते हैं! क्षण में निर्णय लेते समय बड़े आदमीओं की स्थिति देखनी चाहिए।

इस राज़ को क्या जाने साहिल के तमाशाई।
हम डूबके जाने हैं, सागर तेरी गहराई।।
लम्होंने खता की थी, सदीओं ने सजा पाई।

क्षण का मामला होता है! कौशल्या ने कहा, 'भरत, तुझे नंदिग्राम में सुख मिलता है तो जा मेरे बाप! कल्पना कीजिए, माँ ऐसा बोल सके? माँ ने सोचा कि इस संत आदमी को जीवित रखना हो तो ईच्छानुसार करने दो। भरत जाते हैं। रोज पादुका पूजन करते हैं। शासन नहीं करते, राजकार्य संभालते हैं, अनुष्ठान करते हैं। 'अयोध्याकांड' समाप्त होता है।

याद रखना, धर्म मूल है। डालियों का महत्त्व है; पत्तों का भी है; तिनकें का भी है। फल-रस का भी महत्त्व है। ये सब विभाग है। धर्म है सत्य, प्रेम, करुणा। जब डालियों को धर्म का महत्त्व देते हैं तो दो डालियां इकट्ठी होने पर अग्नि निकलता है! चंदन का वृक्ष क्यों न हो? पर ये डालियां जब घिसती है तब उसमें अग्नि के सिवा कुछ नहीं निकलता। मूल में आग लगी हो ऐसा देखा नहीं। धर्म कभी झगड़े नहीं करता। हिंसा नहीं करता। वह भड़के और आग नहीं करता। डालियों के घिसने पर ही अंदर-अंदर आग लगती है।

मानस-कागऋषि
:: ९ ::

अपने पास वैचारिक बत्ती है पर दिल में दीप प्रागट्य नहीं है।

कथा के उपसंहारक सूत्रों में प्रवेश करें इससे पहले, विराम की ओर जायें इससे पहले कल सायंकाल साढ़े पांच बजे इसी मंडप में चारण चिंतन-संमेलन का आयोजन हुआ इसमें प्रमुख देवलसाहब और अन्य वरिष्ठ जनों, सारस्वतों, विचारकों थे। हमें उनसे मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। मैं प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। आप सब जानते हैं, परम स्नेही नीतिनभाई वडगामा ने भूमिका की थी कि प्रत्येक कथा का सारदोहन, रामकथा शीर्षक अंतर्गत अंग्रेजी, हिन्दी, गुजराती में एक पुस्तिका तैयार होती है। इसका संपादन केवल स्नेह हेतु नीतिनभाई और उनकी टीम सेवाभाव से करती है। इस क्रम में आती सभी कथाओं का हो रहा है। प्रसाद के रूप में वितरित होती हैं। कोई शुल्क नहीं है। आप जानते हैं, सब तक कथा पहुंचे ऐसा एक मंगल प्रयास है। 'मानस-सरजू (यु.पी.) की कथा हुई थी उसकी पुस्तक देह आप सब को अर्पित हुई। मैं प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

हम लोग काग बापू के खेत में रामकथा का गायन संवाद के रूप में करते रहे। आज नौंवा दिन है। पहले थोड़ा कथा का क्रम ले लूं और उपसंहार करूं। कल भरत का त्याग, तपस्या, भजन के साथ 'अयोध्याकांड' को विराम दिया था। 'अरण्यकांड' तीसरा सोपान है। भगवान बारह-तेरह वर्ष चित्रकूट में रहते हैं। ब्रह्मत्व भले लीला करे, स्वयं को छिपाए फ़िर वह पहचान में आए और उसकी जो नरलीला है, उसी का अवतार कार्य है। उसमें बाधा आए। अत: भगवान को लगा कि मैं अब यहां से स्थलांतर करूं। 'अरण्यकांड' के आरंभ में एक ऐसी ही लीला ठाकोरजी ने की है कि लक्ष्मणजी फल-फूल लेने गए हैं। और भगवान राम और सीताजी की मर्यादा जरा भी टूटती नहीं है और भगवान राम जानकीजी के बालों में फूल का शृंगार करते हैं। एक आदर्श दांपत्य है। भवन हो या वन हो, मन में सद्भाव होना चाहिए। इन्द्रपुत्र जयंत कौआ बनकर चंचूपात करता है। जयंत की एक आंख फ़ोड़ दी जाती है। जगत को एक ही दृष्टि से देखना है। एक संदेश दिया। परंतु भगवान राम को लगा कि अब मुझे स्थलांतर करना चाहिए। तीनों चित्रकूट से यात्रा का आरंभ कर अत्रि-अनसूया के आश्रम में आते हैं। अत्रिजी प्रभु की स्तुति करते हैं। तुलसीदासजी ने यह स्तुति 'मानस' में गाई-

नमामि भक्त वत्सलं । कृपालु शील कोमलं ।।
भजामि ते पदांबुजं । अकामिनां स्वधामदं ।।

प्रभु वहां से आगे बढ़े। अनेक ऋषिमुनिओं से मिलते-मिलते, सरभंग को मिलकर प्रभु कुंभज ऋषि के आश्रम में आए। वहां से भगवान आगे बढ़े। रास्ते में जटायु के साथ मैत्री कर प्रभु पंचवटी, गोदावरी तट पर निवास करते हैं। समय परखकर लक्ष्मणजी ने पांच प्रश्न पूछे हैं। मानव का आध्यात्मिक जीवन भी पंचतत्त्व का बना है। राम द्वारा जवाब मिले तो पंचवटी धन्य बन जाय। फ़िर शूर्पणखा आती है। लक्ष्मणजी ने पांच आध्यात्मिक प्रश्न पूछे और रामजी ने अद्भुत उत्तर दिए। शूर्पणखा की एन्ट्री है। इसका अर्थ यह है, लक्ष्मण जाग्रत मानव है तब कोई न कोई शूर्पणखा विक्षेप करने आ जाती है। सोये मानव का प्रश्न ही नहीं है। मेरी तलगाजरडी आंख शूर्पणखा को तृष्णा या वासना मानती है। उस पर भी गुरुकृपा से नौ दिन तक बोला हूं। लक्ष्मणजी शूर्पर्णखा को दंडित करते हैं। शूर्पणखा लंका जाती है। रावण को उत्तेजित करती है। रावण जानकी अपहरण की योजना बनाता है। सीता की छाया का अपहरण होता है।

इस ओर मृग मारकर अपने परमप्रेमी को स्वयं में समाकर भगवान राम कुटिया पर आते हैं। बिना सीता की कुटियां देखकर प्रभु पागल की तरह रो देते हैं। सुंदर नरलीला का प्रतिपादन है। जटायु मिलते हैं। पितातुल्य आदर देकर रामजी ने उनका संस्कार किया है। जटायु को सारुप्यमुक्ति दी है। वहां से भगवान सीता की खोज करते-करते आगे बढ़ते हैं। शबरी के यहां आए। भगवान शबरी में नवधा भक्ति देखते हैं। 'रामचरित मानस' में लिखित भक्ति बहुत सरल है बाप! आप को 'श्रीमद् भागवत' का परिचय है। तुलसीजी भी सहमत है। श्रवणादि नवधा भक्ति का स्वीकार करते हैं। 'रामचरित मानस' में भक्ति और भगत के लक्षण बताए हैं। हम जैसे साधारण मानवों के लिए एक नई रीत बताई है।

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा।
दूसरि रति मम कथा प्रसंगा।।

किसी साधुपुरुष का संग करना यह पहली भक्ति है। भगवान की कथा चलती हो तो प्रेमपूर्वक श्रवण करना यह दूसरी भक्ति है।

मुझे गाडी में चिठ्ठी मिली कि 'सद्गुरु रुठता है? और रुठे तो क्या करना?' बाप, मुझे इतना ही कहना है कि रुठे वो सद्गुरु नहीं। सीधी व्याख्या है। दिखने में अपने जैसा हो, दिल सागर जैस हो। हैसियत कम न हो। शायद आप को लगे कि सद्गुरु रुठा है तो आप की भूल है या आप मानते हैं इतनी ऊंचाई पर वह व्यक्ति नहीं पहुंचा हो। बुद्धपुरुष नहीं हुआ है।

दूसरा प्रश्न था कि हम सद्गुरु को याद करते हैं तो उन्हें पता चलता है कि हम उन्हें याद करते हैं? अच्छा प्रश्न है। मैं बहुत दृढ़तापूर्वक गुरुपरंपरावादी हूं, प्रवाही परंपरा का हूं। मुझे कहना है यदि चरखा चलाना आता है, उसका बड़ा चक्र एक बार घुमाए तो वो तकली प्राय: सौ बार घूम ही जाती होगी। हम सद्गुरु को याद नहीं करते; वह एक बार याद करे तो हम एक सौ आठ बार याद करते हैं। हमें खबर नहीं होती। हमें कोई टच करता है। यह गुरुपरंपरा का रहस्य है। कोई हमें स्मृति में लेता है तब हमें उसकी याद आती है। दो वस्तु। गुरु कभी भी नाराज़ नहीं होता। हम उसे तभी ही स्मरण में लेते हैं जब उसकी पूजा में, उसके यज्ञ में, उसके भजन में, जागरण में कभी वह याद करता है। अपनी तकलियां घूमने लगे तब हम उसे याद करते हैं। तुलसीजी भक्ति की बात करते हैं-

गुरु पद पंकज सेवा तीसरि भगति अमान।

गुरुचरणकमल की सेवा, अभिमान छोड़कर करनी तीसरी चरण भक्ति है। गुरु-पद-पंकज-कमल शब्द है। जिस गुरु का आचरण असंग हो ऐसे चरण की भक्ति अभिमान छोड़कर करनी चाहिए। जितनी आज्ञा गुरु दे उतनी ही सेवा करनी है, अधिकतर नहीं; स्पर्धा नहीं, दौड़धूप नहीं। वे कहे कि यह कर फ़िर देरी नहीं करनी है। गुरु की सेवा का यह नियम है। उसकी रूचि अनुसार करनी है। बाप, चौथी भक्ति 'मम गुन गन करइ कपट तजि गान।'

कपट छोड़कर जो कथा-भजन गाता है वही सही है। हेतु या कपट हो तो वह भक्ति नहीं है, दंभ है। पांचवीं भक्ति-

मंत्र जाप मम दृढ बिस्बासा।
पंचम भजन सो बेद प्रकासा।।

हे शबरी, राम-कृष्ण-शिव, अल्लाह, पीर, पयगंबर, बुद्ध, महावीर, जगदंबा जिसकी जिसमें श्रद्धा,उसके मंत्र का विश्वासपूर्वक जप करें। हम बहुत कार्यरत रहते हो तो धीरे-धीरे सभी प्रवृत्ति में से निवृत्ति को छठ्ठी भक्ति कहते हैं। अतिशय प्रवृत्ति से निवृत्ति की ओर प्रयाण छठ्ठी भक्ति है। और सातवीं-

सातवँ सम मोहि मय जग देखा।
मोतें संत अधिक करि लेखा।।

सातवीं भक्ति, सब कुछ मुझ में दीखे। समस्त जगत ब्रह्ममय दीखे। इसके सिवा चारा नहीं है। साहब! यह बहुत ही भयंकर रोग की एक मात्र दवा है। दूसरों में दोष दीखते हैं इसका एक मात्र कारण। जब तक दूसरों में हरि न दीखे तब तक यह दोष दर्शन बंद नहीं होगा। किसी में दोष न देखना सातवीं भक्ति है। यह तभी संभव हो जब सब में हरिदर्शन हो। अपने पुरुषार्थ से जितना प्राप्त हो यह आठवीं भक्ति है। प्रामाणिक रूप से प्रयत्न करें और जो मिले उसमें संतोष माने।

नवम सरल सब सन छलहीना।
मम भरोस हियँ हरष न दीना।।

सब के साथ छल-कपटहीन जीना यह नौवीं भक्ति है। इनमें से एक भी हो वह मुझे अत्यंत प्रिय है। शबरी, आप में सभी है। फ़िर प्रभु पंपा सरोवर आए और नारदजी से मिले।

'किष्किन्धा' में हनुमानजी का आगमन होता है। सुग्रीव राजा और अंगद युवराज बने। चातुर्मास शुरू होता है। भगवान का उदासीन व्रत है। कहा कि मैं निकटस्थ प्रवर्षण पर्वत पर चातुर्मास करूंगा। सुग्रीव विलास में डूबा और राम को दिया वचन भूल गया। सुग्रीव प्रभु की शरण में गया। सीता की खोज का आयोजन शुरू हुआ। सभी भालू-बंदर तीन दिशाओं में भेजे गए। दक्षिण की टुकडी का नायक अंगद है। मार्गदर्शक जामवंत है। सभी भगवान के चरणस्पर्श कर जाते हैं। हनुमानजी ने आख़िर में पैर छूए। प्रभु को लगा, काम तो यही आयेगा। हाथ पकड़ निकट बुलाया, मुद्रिका दी। हनुमानजी ने मुद्रिका मुख में रखी। वे रामनाम के प्रताप से सागर तैर गए। रामनाम मुंह में रखने से मौन रहने का फायदा है। जानकी की खोज के प्रयत्न निष्फल गए। ऐसे समय हनुमानजी मौन बैठे हैं। प्रभु स्मरण करते हैं। मौन बहुत कुछ कर जाता है। मौन और धैर्य बहुत काम कर जाय। अब जामवंत हनुमानजी को आह्वान देते हैं। हनुमानजी पर्वताकार होकर जामवंत के चरण छूए। जामवंत ने कहा, जानकी से मिलकर संदेश का आदान-प्रदान करना। हो सके तो रावण की व्यूह रचना, शस्त्र देख लीजियेगा। युवाओं को समाज के जामवंतों के मार्गदर्शन में कदम उठाने चाहिए। अब 'सुन्दरकांड' का आरंभ होता है।

जामवंत के बचन सुहाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।।
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई।
सहि दुख कंद मूल फल खाई।।
जब लगि आवौं सीतहि देखी।
होइहि काजु मोहि हरष बिसेषी।।

हनुमानजी लंका के लिए निकलते हैं। मैनाक, सुरसा और लंकिनी तीन विघ्न आते हैं। यह भक्तिमार्ग में जीवनयात्रा के विघ्न है। हनुमानजी सफल हुए। लंका में प्रवेश करते लंकिनी ने रोका। लंकिनी को जब होश आया तो जिसे चोररूप में देखती थी उस हनुमानजी में उसे संत दिखने लगे। दृष्टि बदलने से दर्शन बदलते हैं। हनुमानजी एक-एक भवन में घूमे पर जानकी नहीं मिली। रावण सोया हुआ था। हनुमानजी ने सोचा, सोया आदमी हो वहां भक्ति नहीं होती। विभीषण का भवन; रामनाम अंकित, तुलसीक्यारा; हनुमानजी सोचते हैं कि लंका में वैष्णव कहां से? प्रतीक्षा की। सुबह हुई। विभीषण जगता है। उसने युक्ति बताई। हनुमानजी माँ तक पहुंचते हैं। वृक्ष की घटा में छिप जाते हैं। सोचते हैं, क्या करूं? उसी वक्त रावण आता है। श्रोताजन भरोसा रखिए, अपने जीवन में रावणरूपी समस्या आती है उससे पहले

हनुमानरूपी समाधान आ चुका होता है। उस समय धैर्य रखिए। उस समय इधर-उधर नहीं देखना, ऊपर देखना। वो कहेगा, आ गया हूं, फ़िकर न कर।

अपने अस्तित्व का एक नियम है बाप, कि ईश्वर भूख दे उससे पहले अन्न तैयार रखना ही पड़े। यदि न करे तो वह ईमानदार नहीं है। प्यास लगने से पहले पानी तैयार किया है। हमें समाधान तक नहीं जाना है, स्वयं समाधान कूदकर अपने पास आ जायेगा। पहले जानकी को मुद्रिका दी। इसका अर्थ हुआ कि समाधान हमें पहले हरिनाम स्मरण की याद दिलाता है कि हरिस्मरण शुरू कर दे। तुम्हारी सारी समस्याएं दूर हो जायेगी। थोड़ा समय लगेगा। जीवनरथ के दो चक्र शौर्य और धैर्य है, ऐसा 'लंकाकांड' में लिखा है। माता-पुत्र का मिलन हुआ। माँ ने आशीर्वाद दिए। संदेश दिया है। भूख लगी। फल खाए। राक्षसों को सावधान किया। इन्द्रजित हनुमानजी को बांधकर लंका ले गया। रावण के साथ संवाद हुआ। रावण ने मृत्युदंड का एलान किया तब विभीषण कहते हैं, 'बड़े भैया, दूत अवध्य है। नीति कहती है, आप दूसरा दंड दीजिए।' अंत में पूंछ जलाने का तय हुआ। जीव या साधक भक्ति तक पहुंच जाता है फ़िर तत्कालीन समाज उसे जलाने की कोशिश करता है। जिसकी भक्ति मजबूत होगी, जिसकी ममता ईश्वर समर्पित होगी उसे समाज जलायेगा तो वह खुद नहीं जलेगा, वह झूठी मान्यतारूपी लंका को जलायेगा, बाप! अनाथ की तरह लंका जली है, एक विभीषण के घर को छोड़कर। सोना ज्यादा इकठ्ठा होता है तो बहुत भड़के होते हैं इसमें आश्चर्य नहीं है। खाली मान्यता जलानी है। एक भी आदमी को नहीं जलाया है, साहब! फ़िर हनुमानजी समुद्र में स्नान करते हैं। पुन: माँ के पास गए। बिदाई मागी। निशानी मागी। माँ ने चूडामणि दिया राम ज्ञान है अत: वे हनुमान को मुद्रिका देते हैं। ज्ञान है तो साधक को भक्ति ही दे। जानकी भक्ति है। वह साधक को ज्ञान दे। चूडामणि ज्ञान का प्रतीक है।

हनुमानजी वापस लौटे। मित्रों ने जयजयकार किया। सभी सुग्रीव के पास गए। फ़िर राम से मिले। भगवान प्रेम से हनुमान को गले लगाते हैं। निर्णय हुआ, हम देरी न करें। सभी समुद्र तट पहुंचे। यहां रावण की सभा हुई। विभीषण ने सत्वचन कहे। रावण ने चरण प्रहार किया। विभीषण हरिशरण आया। प्रभु ने आसरा दिया। भगवान ने मत लिया। विभीषण ने कहा कि आप के कुल में आप का ज्येष्ठ जन सागर माना जाता है। तो आप तीन अपवास कीजिए। समुद्र मार्ग दे तो हमें बल प्रयोग नहीं करना है। रामकाल से भारत में यही नीति थी। समझाने की पूरी कोशिश की। तीन प्रयत्न किए। रामजी ने सोचा, अब मुझे लोकमंगल के लिए धनुष लेना पड़ेगा। अंत में धनुष के प्रताप से समुद्र में ज्वाला उठी है। समुद्र शरण में आया है। आप मुझे क्षमा करे। मैं आप को एक उपाय बताऊं। आप सेतु बनाईए। समुद्र की विदा पर 'सुन्दरकांड' समाप्त होता है।

'लंकाकांड' के आरंभ में काल का वर्णन है। सेतुबंध बना है। सर्वोत्तम जगह जानकर शंकर की स्थापना की इच्छा प्रदर्शित की। सेतु रचना के बाद कल्याण की स्थापना होनी चाहिए। सेतुबंध के बाद ही कल्याण की स्थापना होती है। महादेव रामेश्वर की स्थापना हुई। सेतु द्वारा लंका पहुंचे। सुबेल पर प्रभु का पड़ाव है। रावण को समाचार मिले कि राम और उनकी सेना आ गई है। तो भी रावण को सपने में भी ड़र नहीं है। गुरु को क्या डर? उसे पता है उसके लक्षण अच्छे नहीं है। पर शंकर जैसा गुरु है। रामजी ने अपने बाण से रावण का रसभंग किया। दूसरे दिन अंगद राजदूत बनकर संधि प्रस्ताव लेकर गया। संधि निष्फल रही। युद्ध अनिवार्य बना। भयानक युद्ध हुआ। एक के बाद एक असुर वीर गति को प्राप्त होते हैं। रावण का रामजी के सामने महायुद्ध होता है। विश्वमंगल के साथ रावण का भी मंगल करने के लिए रघुनाथ ने इकतीस बाण चढ़ाए। दस मस्तक, बीस भुजाएं और इकतीसवां बाण नाभि में लगते रावण पहली और आख़िरी बार 'राम कहां है' बोला। मुख में राममंत्र का उच्चार हुआ और प्राणरूपी तेज प्रभु के चेहरे में समा गया है। मंदोदरी आती है। रावण का संस्कार हुआ। विभीषण का राजतिलक हुआ। रामजी-सीताजी का मिलन हुआ। पुष्पक हवाई जहाज तैयार

हुआ। अवध की यात्रा हेतु उड़ान भरी। कुंभज आदि महात्माओं के आश्रम में प्रभु हवाई जहाज लेकर आते हैं। फ़िर गुहराज के पास हवाई जहाज आता है। हनुमानजी को भरतजी को ख़बर देने भेजे हैं। रामजी गुहराज से मिलते हैं और 'लंकाकांड' समाप्त होता है।

'उत्तरकांड' में विरह व्यथा का वर्णन है। इस ओर एक दिन बाकी है और राघव न पहुंचे तो भरतजी प्राण छोड़ने का निर्णय करते हैं। ऐसे वक्त हनुमानजी आ जाते हैं। समाचार देते हैं कि सपत्नी, सानुज, सकुशल भगवान रामभद्र आ रहे हैं। हवाई जहाज सरजू तट आता है। अवध की परिकम्मा कर प्रभु का हवाई जहाज जन्मभूमि पर उतरता है। भगवान अपने सखाओं के साथ उतरकर मातृभूमि को प्रणाम करते हैं। गुरुदेव वशिष्ठजी से मिले और वहीं शस्त्र रख दिए। मानो कहा कि यह महान ओपरेशन था सो पूरा हुआ। अब मुझे शस्त्र रखने की जरूरत नहीं है। अब शास्त्र के चरण पकड़ता हूं। यह संदेश जगत को दिया। अवधवासीओं की इतनी बड़ी संख्या, प्रभु को हुआ, सब मुझ से मिलना चाहते हैं। मेरे राघव ने ऐश्वर्यलीला की। प्रभु अमितरूप लेकर सब से मिले। सब से पहले भगवान कैकेयी भवन गए। सभी माँ कौशल्या के पास गए। वशिष्ठजी ने दिव्य सिंहासन मंगवाया। आज ही राजतिलक का निर्णय लिया गया। भगवान राम ने माँ को, गुरु को, धरती को, जनता को, दिशाओं को, भगवान भास्कर को प्रणाम कर सिंहासन पर बिराजमान हुए। विश्व को रामराज्य यानी प्रेमराज्य देते भगवान वशिष्ठजी ने रामजी के भाल पर राजतिलक किया। तुलसी की चौपाई-

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

प्रेमराज्य की स्थापना हुई। त्रिलोक में जयजयकार हुआ। छः मास बीत गए। दिव्य रामराज्य का वर्णन हुआ, जो गांधीबापू चाहते थे। हम सब रामराज्य चाहते हैं। अद्‌भुत वर्णन है। फ़िर भगवान ने सभी मित्रों को बिदा दी। भगवान को ख्याल आया कि ये मेरे सखा है। अयोध्या में भी उनके विचार आता है। यहां रहकर घर के विचार करते हैं इससे अच्छा है कि घर रहकर यहां के विचार कीजिए। मेरा राघव प्रेक्टिकल है। 'गीता' में लिखा है, पुण्य पूरे होने पर मृत्युलोक में लौटना पड़ता है। जिसके पुण्य पूरे न हो उसे फेरा न खाना पड़े। इसलिए हनुमानजी को कहा कि 'पुन्य पुंज तुम्ह पवनकुमारा।' आप को अयोध्या छोड़कर जगत में नहीं जाना पड़ेगा। सो उन्हें वही रखे, बाकी सब को बिदाई दी।

समय मर्यादा पूरी होते जानकीजी ने दो पुत्रों को जन्म दिया है। उसी तरह सभी भाईओं के यहां दो-दो पुत्रों का जन्म होने का तुलसी ने उल्लेख किया है। फ़िर तुलसी ने रामकथा पर पर्दा डाल दिया। मैं बार-बार कहता हूं तुलसीजी को अपवाद, विवाद और दुर्वाद की कथा मंजूर नहीं है। चाहे दूसरे संतों-मुनि कहे पर तुलसी को केवल संवाद ही चाहिए। सीता-राम लोकहृदय पर आसीन है, अब मैं उन्हें बिलग करना नहीं चाहता। यह तुलसी का शिवसंकल्प है। फ़िर कागभुशुंडि का चरित्र आता है। खगराज गरुड उनके चरणों में बैठकर कथा सुनते हैं। भुशुंडि ने अपना आत्मचरित्र गाया है। काग शरीर और कथा कैसे मिले इत्यादि कहा। गरुडजी अपने बुद्धपुरुष के चरणों में प्रणाम कर आख़िर में सात प्रश्न पूछते हैं। कागऋषि जवाब देते हैं। प्रश्न पहला, हे मेरे गुरु, इस जगत में अनेक शरीर है पर उत्तम देह कौन-सी? दूसरा प्रश्न, इस जगत में सब से दुःख और सुख कौन-से हैं? तीसरा प्रश्न, संत किसे कहे? चौथा प्रश्न, असंत के कौन से लक्षण हैं? पांचवां प्रश्न, जगत में बड़ा पाप क्या है? छठ्ठा प्रश्न, महान पुण्य कौन-सा है? सातवां अंतिम प्रश्न, मानसिक रोग कैसे होते हैं? यह सब कहिए।

यह प्रसंग और अंतिम प्रश्न मुझे इसलिए पसंद है; पार्वती ने कथा सुनी, भरद्वाजजी ने भी सुनी, संतों ने तुलसी से सुनी पर उनमें से किसीने मानसिक रोगों को लेकर जिज्ञासा नहीं की है। हमें अपने मानसिक रोगों की कोई चिंता ही नहीं है! हमें लगता है कि हम बराबर ही हैं! हमारी इर्ष्या-द्वेष-पाखंड-निंदा इनके लिए हम गंभीर ही नहीं है। मुझे कहने दीजिए, गरुड ही मानसिक रोगों को लेकर गंभीर बना है। पक्षी ने मनुष्यजाति की ओर से पूछा कि हमारे मानसिक रोगों का हमें दर्शन करवाईए।

तुलसीजी ने आयुर्वेद का आश्रय लिया है। अपने शरीर में वात, कफ, पित्त होते हैं। तीनों शरीर के लिए जरूरी है, ऐसा आयुर्वेदाचार्य कहते हैं। काम-क्रोध-लोभ हमारे लिए जरूरी है। टी.बी., केन्सर, बुखार का अद्‌भुत वर्णन किया है। हमारे सभी मानसिक रोगों का स्पष्टीकरण किया है। फ़िर गरुड इन सभी रोगों का इलाज पूछते हैं। तब भुशुंडिजी कहते हैं-

सदगुरु बैद बचन बिस्बासा।

इस रोग के डोक्टर एक सद्‌गुरु है। इसकी फ़ी क्या है? विज़िट चार्ज क्या है? एक ही चार्ज है, 'बचन बिस्बासा'; उसकी वाणी पर भरोसा। बुद्धपुरुष की वाणी पर भरोसा। फ़ी क्या? वह सब को फ्री रखते हैं। सब को मुक्त रखते हैं। हम सब के पास वैचारिक बत्ती है पर अंदर दिया-ज्योत का क्या? कथा लेकर घूमता हूं। बहुत लालटेन देखी है। पर सब उधार की लालटेन है। दिल में दीप प्रागट्य नहीं हुआ। इन सभी जगदंबाओं को इसीलिए याद करते हैं, उनके दिलमें ज्योत जली है। यह समझ का दीया है, ज्ञानदीप है। 'अप्पदीपो भव।' फ़िर गरुड पूछते हैं, गुरु मिले, इनके वचन में विश्वास रखे लेकिन कोई परहेज है? कौन से नियम पालने हैं। तो, 'संजम यह न बिषय कै आसा।' गरुड संयम इतना ही रखना कि फ़िर इसकी अधिक आशा नहीं रखनी है। तीनों संतुलित मात्रा में जरूरी है। फ़िर दवा लागू होते ही बुखार उतर जाय, भूख लगने लगे, यूं गुरुकृपा से मानसिक रोग जायेगा फ़िर कौन-सी भूख खुलेगी? तुलसी कहे, भुशुंडि कहते हैं, 'सुमति छुधा।' सन्मति, सद्‌बुद्धि की भूख जगेगी। मुझे अब सुमति खानी है। मुझे सद्‌विचार खाने हैं। मैं इन्हें पचाना चाहता हूं। मुझे राम रसामृत पीना है। मुझे ऐसे पेय पीने हैं। सुमति की भूख बढ़नी चाहिए। 'सुमति छुधा बाढ़इ नित नई।' फ़िर दवा लागू होते खुराक शुरू हो जाय तो कमजोरी न रहे। 'बिषय आस दुर्बलता गई।' विषय की अधिक आशा वही दुर्बलता-कमज़ोरी खत्म हो जाते हैं। यों गरुड के प्रश्नों के उत्तर भुशुंडि ने दिए।

भगतबापू ने किसी न किसी संदर्भ में इन सात प्रश्नों के उत्तर दिए हैं। इनके जवाब हंस ही दे सके ऐसा नहीं है, काग भी दे सकता है। पर सवाल है गुरु की वाणी पर भरोसा। भुशुंडि ने पूछा, 'गरुडजी, अब कुछ पूछना है?' गरुड ने कहा, 'मेरे पंख खुल रहे हैं, मुझे उड़ना है।' बाप, नौ दिनों तक श्रवण किया है। अब थोड़ा उड़ना, लाइट बनना। जहां है वहां से थोड़ा उपर उठे। भुशुंडि ने कथा को विराम दिया। त्रिवेणी के तट पर याज्ञवल्क्यजी कथा कहते हैं। प्रयाग में है। वह कथा पूरी हुई या नहीं स्पष्ट नहीं है। कह सकते हैं कि जब तक त्रिवणी रहेगी तब तक कथा चलती रहेगी। कैलासपति महादेव पार्वती को पूछते हैं, अब और सुनना है? पार्वती ने कहा, 'हे महादेव, मैं कृतकृत्य हुई। मेरी श्रद्धा दृढ़ हुई। महादेव ने कथा को विराम दिया। अब तुलसीजी अपने मन को कथा कहते-कहते संतों के सामने कथा को विराम देते हैं। तुलसी ने कहा-

जाकी कृपा लवलेस ते मतिमंद तुलसीदासहूँ।
पायो परम बिश्रामु राम समान प्रभु नाहीं कहूँ।।

मुझ जैसे मतिमंद को जिसकी लवलेस कृपा से परम विश्राम प्राप्त हुआ ऐसे राम समान मैं अन्य किसको गिनूं? राम राम है, परमतत्त्व है।

'मानस' के संवाद घाट पर बैठे ज्ञान घाट से शिव ने कथा पूरी की। कर्मघाट से याज्ञवल्क्य ने पूरी की या नहीं, पता नहीं। उपासना घाट पर भुशुंडि ने गरुड के सामने कथा पूरी की। शरणागति घाट से तुलसी ने अपने मन और संत समाज के सामने पूरी की। चारों के आशीर्वाद लेकर मैं आप के सामने संवाद रचकर बैठा था। कागबापू के स्मरण नौ दिन की कथा पूरी हो रही है। कागबापू के खेत में, आइमाँ के आशिष से साढ़े तीन पाले समाज के सहयोग से कथा के विराम समय क्या कहूं? बाप, आप सारस्वत हैं। आप की व्यासपीठ के प्रति संवेदना है यह मेरा सद्‌भाग्य है। गुरुकृपा से व्यासपीठ पर से उतरते वक्त पचपन वर्षों से अनुभव होता है कि कितना कुछ कहने का बाकी रह गया है। यह पीठ की महिमा है। तलगाजरडा का बावा बिदा लेता है तब मुझे

आप से कोई सूत्र नहीं पकड़ाना है। आप सब मर्मी हैं। आप का भीतर हंस का है। भले ही 'काग' कहलाओ। पर इसमें से नीर-क्षीर अलग करना। 'रामायण' पोथी को खोलते रहियेगा। भगतबापू ने कहा था, चारण 'रामायण' पढ़ता है।

चारणो सौ सरस्वतीने सेवे अने गीत 'रामायण' गाय।
सवळी जीभे बेसजे चंडी अने मारी वैखरी वाणी जाय।।

बाप! 'रामचरित मानस' सांप्रदायिक ग्रंथ नहीं है। अधम पक्षी को भी प्राप्त हो सकता है। आप सब ने कागबापू के खेत में एक साधु का मनोरथ पूरा किया इसके लिए मैं आनंद व्यक्त करता हूं। हमारे नौ दिन उजले गए। फागुन में नौरात्रि आई थी, साहब! गरबी के रूप में आइमाँ बैठी थी। हम सब रास ले रहे थे। चारों ओर से साढ़े तीन पाले इकठ्ठे हुए, साहब! बृहद चारण समाज और योगेशभाई, मुझे कहने दीजिए कि यहां जो उपस्थित है साढ़े तीन पाले नहीं थे पर यहां अशरीरी थे। इसमें कौन कहां बैठे होंगे हमें क्या पता? मूल निवास से भी आये होंगे, खुश भी हुए होंगे।

भगतबापू का स्मरण तो है ही, लेकिन जो हो गए, जो है और जो होंगे उन सब का स्मरण करता हूं। जो जगदंबाएं हुई और होगी उन सभी माताओं का स्मरण कर कथा को विराम देने जा रहा हूं। साढ़े तीन पाले समाज के साथ समग्र समाज को याद करके विराम देता हूं। आप को सीख नहीं देनी है। आप चुन लीजिए। जिस खेत में कथा है, वह समग्र वह समग्र काग परिवार, समग्र चारण समाज और इस खेत में मुझे गाने को मिला इसकी मुझे प्रसन्नता है। मुऐ अवसर मिला इसकी खुशी है।

मेरे मन में से कोई मिल जाय तो सहज विश्वास की तरह निकल जाय; शायद न सुनाई दे तो भी हृदय में से अवश्य निकले, खुश रहो। आशीर्वाद देने की मेरी हैसियत नहीं है। 'महाभारत' में प्रसंग है। कृष्ण अर्जुन से कहते हैं, अब युद्ध पूरा हुआ पर रथ में से पहले तू उतर फ़िर मैं। कृष्ण के उतरते ही रथ जल गया! कृष्ण द्वारा ही रथ सुरक्षित था। इस पोथीके प्रताप से सब पार उतरा। सब का जतन हुआ। खुश रहिए, ऐसा कहते हुए बिदा लेनी है।

खुश रहो, हर खुशी है तुम्हारे लिए।
छोड़ दो आंसूओं को हमारे लिए।।

खुश रहो बाप, खुश रहो, खुश रहो। आप सब को रामकथा का फल अर्पित करता हूं। भगतबापू, जोगमाताएं और साढ़े तीन पाले का समाज इन तीनों को कथा का फल अर्पित करता हूं। बाप! 'अब तुम्हारे हवाले वतन साथीओ।' योगेशभाई कहते थे कि किसान हूं। और मैं भी बोने को कहता था। अब जोगमाताओं ने बारिश की झड़ी लगा दी कि बोओ, फसल पाओ। कृपा बरस गई। कथा निर्विघ्न पूरी हुई।

एक प्रश्न है कि 'हम सद्गुरु को याद करे तो उन्हें पता चलता है कि हम उन्हें याद करते हैं?' मैं बहुत दृढ़तापूर्वक गुरु परंपरावादी मानव हूं। प्रवाही परंपरा का हूं। मैं इतना कहता हूं कि यदि हमें चरखा चलाना आता है और बड़ा चक्र एक बार घुमाए तो वह तकली सौ बार घूम जाती है। हम सद्गुरु को याद नहीं करते; वह हमें एक बार याद करे तो हम उन्हें एक सौ आठ बार याद करते हैं! हमें पता नहीं रहता! हमें कोई टच करता है। ये सभी गुरुपरंपरा के रहस्य हैं। हमें कोई स्मृति में लेता है तब हमें उनकी याद आती है।

मानस-मुशायरा

कज़ा को रोक देती है दुआ रोशन ज़मीरों की।
भला मंज़ूर है अपना तो कर खिदमत फ़कीरों की।

•

कहां चलना कहां रुकना, समझना भी जरूरी है।
वर्ना जिसके लिए हम दौड़ ते हैं, वह पीछे छूट जाते हैं।

•

कभी कभी वो मुझको ऐसी रसाई देता है।
वो सोचता भी है तो मुझको सुनाई देता है।

•

इस राज़ को क्या जाने साहिल के तमाशाई।
हम डूबके जाने हैं, सागर तेरी गहराई।

•

अगर नाचूं नहीं, तो पैर मेरे रूठ जाते हैं।
अगर नाचूं खूलके तो घूंघरुं टूट जाते हैं।

•

किस पर पथ्थर फैंकूं, 'कैसर' कौन पराया है।
शिश महल में हर एक चेहरा मुझ-सा लगता है।

•

अकेला है हुश्न इतना कायनात में,
कि इन्सान को बार-बार जनम लेना चाहिए।

•

वो जानता था कि मुझे उसका मुस्कुराना पसंद है 'फ़राज़।'
इस लिए दर्द भी देता था तो मुस्कुराके देता था।

क्वचिदन्यतोऽपि

भगतबापू में मुझे गंगा, जमना, सरस्वती और सरजू चार नदियों के दर्शन होते हैं

'काग–अवोर्ड' अर्पण समारोह में मोरारिबापू का मननीय प्रवचन

सौ प्रथम आदिशक्ति माँ भगवती को याद करूं, प्रणाम करूं। उसी परंपरा में पूज्य आइमाँ सोनलमाँ को याद करूं; कंकु केसरमाँ, जितनी आइमाँ यहां उपस्थित है और जो आनेवाली है, सभी को प्रणाम। जिसकी चेतना हमें खींचकर यहां लाती है ऐसे भगतबापू-पूज्य कागबापू की समग्र चेतना को प्रणाम। आज ये पांच अपने-अपने क्षेत्र के वंदनीय महानुभाव पंचक, जो यहां बिराजमान है। उनके कार्य को, कंठ को, कथनी-करनी को, कविता को प्रणाम करता हूं। रामभाई काग को याद करूं। बाबुभाई काग और उनका समग्र परिवार, समग्र मजादर और साढ़े तीन पाले, समग्र चारण समाज, सब को प्रणाम करता हूं। दिखावा नहीं पर अंदर से प्रणाम करता हूं। अयोध्या के महात्मा केवल बोलते हैं, दंडवत् करते नहीं है! पर मैं हृदय से नमन करता हूं।

स्वमानी छुं कदी विण आवकारे त्यां नहीं आवुं,
अगर तू दई शके मुजने तो धरती पर गगन देजे।
खुदाया! आटली तुजने विनंती छे आ 'नाज़िर'नी;
रहे जेनाथी अणनम शीश मुजने ए नमन देजे।

चारण समाज में उन्नत शीश है। जगदंबा के सिवा किसीके सामने झूके नहीं है। मुझे इसका आनंद है। तो बाप, समस्त समाज की वंदना करता हूं।

कितने सुंदर मुहूर्त में यह विचार आया! काग के महोल्ले से खेत में आए हैं। बहुत अच्छा कहा बळुभाई; शहर में से आया किसान अच्छी खेती कर गया! उसके पास हल नहीं था पर माताजी का बल बहुत था। मेरे वरिष्ठजन प्रभुदानभाई, उनसे साहित्य सुना करता था। उनके पुस्तक-विमोचन में भी गया था। यह कविराज चारणी साहित्य की आंट-सांट जानता है। प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। शक्ति उपासकों को प्रशंसा पसंद नहीं आती। पर जिस दिन उन्हें प्रशंसा पसंद आयेगी, उसकी जिह्वा से शक्ति निकल जायेगी! नुकसान न हो यह देखना हमारा फर्ज़ है। यशवंतभाई को काग मुहल्लें में बीस मिनट दी थी पर पूरा किया नब्बे मिनट में! किसी की ऐसी की तैसी! सीमा में बंधे वह चारण नहीं! मैं बहुत प्रसन्न हूं। किस किसके नाम लूं? सब को प्रणाम करता हूं।

इस विचार ने आकार लिया। कागबापू के पुण्यश्लोक नाम के साथ यह अवोर्ड दिया जाता है। यह वस्तु मूल्यवान नहीं है; दूसरा कुछ भी नहीं; रूपये तो जरा भी नहीं! पर है विद्याराशि; समझ के राशि, राही नहीं। लखुबापा, दादाबापू बैठे हैं। ये सब गुणी है। राही नहीं। राही तो ना-समझी के निवेदन है! किसी पर कोमेन्ट करने से पहले दो बार नहीं, एक सौ आठ बार सोचना चाहिए। नहीं तो जिह्वा सड़ जाय! सड़ जाय! सड़ जाय! साहब, ऐसी नुकसानी का धंधा हम क्यों करे?

जय हनुमान ग्यान गुन राशि।
जय कपीश तिहुं लोक उजागर।

ये सब गुणराशि यहां बिराजमान है। अत: उन्हें जो राशि दी जाय वह तो...। ओशो कहते थे, इस देशको समझ नहीं पा रहा हूं! उसने सभी क्षेत्रों की आलोचना की। ओशो कहते हैं, एक बात समझ में नहीं आती कि ग्रामीण हो या शहरी, श्रीमंत हो या गरीब, गंगा को पार करे, नौका में बैठकर, तब दुअन्नी, पांच आने या रूपया गंगाजल में क्यों फेंकते हैं? यह रहस्य समझ में नहीं आता। सयाना तो यही सोचे कि रूपया पानी में डालने से बेहतर है कि किसी गरीब को दे। यह तर्क है। लोज़िक प्रेरित करे,उकसाए कि ऐसा सोच! इसका अर्थ यों कर। पर ओशो जैसे तार्किक ने ऐसा अर्थघटन किया कि इस देश के गांव से लेकर नगर तब सब जानते हैं कि हे गंगा, तेरे पास जो समृद्धि है उसके आगे मेरे रूपये की कोई किंमत नहीं है, अत:फेंकता हूं। यह ओशो का निवेदन है। अत: आज गंगा-सरस्वती बहती है।

भगतबापू में मुझे चार नदियों के दर्शन होते हैं। एक तो गंगा और 'राम भगति जहँ सुरसरि धारा।' यह गंगा है। 'सरसइ ब्रह्म बिचार प्रचारा।' उसकी सरस्वती; ब्रह्मविचार। उनकी विद्या वही है-

बिधि निषेधमय कलि मल हरनी।
करम कथा रबि नंदिनी बरनी।

उन्होंने आख़िरी सांस तक कर्ममार्ग का निर्वाह किया। ''करम कथा रबि नंदिनी', मानो सूर्यपुत्री यमुना बहती हो। चौथी नदी सरजू। गंगा में स्नान करते हैं। भगतबापू के भक्ति गीतों में डूबकी मारनी है। स्नान कर लेना है। वैष्णव यमुनापान करते हैं। लोटी उत्सव मनाए; यमुना पान। सरस्वती बहती रहे तब तक यमुना पान करना है। बाप, उनके कर्म की यमुना। किनारे-किनारे कर्मपाठ

पठन कीजिए। वह सूर्यपुत्री है। उजाले के ओर ही ले जाय, अंधेरे के ओर नहीं। पुत्री को चिंता है कि पिता का घर लज्जित न हो। यह सूर्यपुत्री है, रवितनया है। भगतबापू के कर्मप्रधान काव्य, उपदेश पढ़े। सुबह मैं कहता था-

कर्मवादी बधां कर्म करतां रहे एहने ऊंघवुं केम फावे? ऐसे पद-गीत सुने तब ऐसा लगे, हम यमुना तट पर घूम रहे हैं। सरजू ध्यान की प्रतीक है। तुलसी कहते हैं, सरयू तट पर अवधवासी ध्यान धरते थे। बापू की कुछ कविताएं, बिना बीच में पतंजलि को लाए, आठ-आठ पायदान चढ़े बगैर आदमी को ध्यान तक ले जाती है, यदि हमारा मन चंचल न रहे तो!

मैं कच्छ में एक बार कथा करके आऊं तब जामनगर में पिंगळशीबापू ने कहा कि बापू, आप को इसका प्रोग्राम देना चाहिए। मुझ पर वे बहुत स्नेहादर रखते थे। तब मैं कार्यक्रम में बोलता था और यहां से वहां तक जाते-जाते, तब मुझे एक भाई ने चिठ्ठी दी। वह भाई पढ़ा लिखा होगा। पर शिक्षित और गांग की चिठ्ठी में फ़र्क रहता है!

तमे नानी एवी चिठ्ठी थाजो,
कोरटना कागळ कोई थाशो नहीं।
तमे नानी एवी विरडी थाजो,
समंदर खारा कोई थाशो नहीं।

-भगतबापू

मुझे चिठ्ठी दी। मुझे लगा, अरजन्ट होगा। अतः मैंने बोलते-बोलते पढ़ी। उसमें लिखा था, 'बापू, आप जिस ढ़ंग से व्यक्त हो रहे हैं तो लगता है कि पहले आप नाटक में काम करते होंगे!' मुझे कई लोग कहते हैं, आप को कोई अवोर्ड देता नहीं है या आप लेते नहीं हैं? मैंने कहा, मुझे अवोर्ड मिलते हैं ऐसे किसीको नहीं मिलते!

कोई वंदे, कोई नंदे, कोई करे हमारी आशा,
कहे गोरख सुण अवधु यही पंथ उदासा।

गोरख अपनी बानी बोलते हैं। 'उदासीन नित रहिअ गोसाई।' उसने चिठ्ठी दी कि पहले आप नाटक में काम करते थे? मैंने विषयांतर करके जवाब दिया, एक जिज्ञासु की चिठ्ठी आई है। 'अथातो भ्रमजिज्ञासा' है। 'ब्रह्म-जिज्ञासा' नहीं, 'भ्रम जिज्ञासा' है! मैंने जवाब दिया, मैं न तो नाटक का आदमी हूं या न त्राटक का आदमी हूं। कई लोग ऐसा समझते हैं! मैं कथा का प्रारंभ करूं तब मैं अपने श्रोताओं को देख लेता हूं। एक नज़र से सब को देख लूं। यह मेरी शैली है। पर कई लोग ऐसी चर्चा करते हैं, भावुक जो है, यह बावा चारों ओर देख नज़रबंदी कर लेता है! नज़रबंदी करनी आती हो तो स्तुति और निंदा करनेवालों को बांध न लूं? पर दोनों को मुक्त रखे हैं। साधु नज़रबंदी नहीं करता, सोते हुए को जगाता है। उर्दू का शे'र है-

ये हसीन चेहरे मेरे तस्बीह के दाने हैं।
निगाहें फेर लेता हूं, इबादत हो ही जाती है।

इमाम हुसेन की एक तकरीर में मुझे मौलाना के साथ बोलना था तब मैंने यह शे'र कहा था कि ये जितने हसीन चेहरे हैं, मेरे लिए हुसेन है।। बाप, जहां सत्य, शिव और सुन्दर हो वहां हुसेन है ही। चेहरे की बात मानी स्थूल सौंदर्य की बात ही नहीं है। यह तो मेरे मनके फेरने की शैली है। नज़रबंदी की बात ही नहीं है। बाप, मैं नाटक या त्राटक का आदमी नहीं हूं। मेरे पास कई त्राटकवाले आते हैं! 'बापू, आंखों से आंखें मिला!' यह क्या है? ऐसा है; हमारे यहां ऐसे पंथ है!

नज़र से नज़र ने मुलाकात कर ली,
रहे दोनों खामोश और बात कर ली।
मैं तुझे देखूं, तू मुझे देख।
देखते देखते हो जाये एक।

अद्वैत हो जाना। मैंने कहा, मैं न तो नाटक का आदमी हूं या न तो त्राटक का आदमी हूं। यह सच है। झूठ कहूं तो जीभ गंदी हो जाय। हम तो शब्दों के उपासक हैं। यार, सरस्वती हमें शाप दे तो? ध्यान रखना है। मैं नाटक या त्राटक का नहीं, फ़ाटक का आदमी हूं। यह प्रास में बोलता हूं। हृदय से कहता हूं कि फाटक का आदमी मानी समाज को एक्सिडन्ट न हो जाय इसलिए कब फाटक खोलना और बंद कर देना है। यह काम लेकर बैठा हूं। जब मैं गाडी में निकलूं तब सहसा फाटक बंद हो जाय तब मेरे साथ सब हो और उन्हें जल्दबाजी होती है! फाटकवाले के सामने देखकर कहे, एक मिनट राह देख नहीं सकता?' मैं कहूं कि भाई, रहने दीजिए, मैं वही काम करता हूं। समय से पहले मैं खोलता नहीं हूं, साहब! और समय से पहले बंद भी नहीं करता हूं।

मैं हलचल करता हूं, तो मैं नाटक का आदमी नहीं हूं। नाटक में मेरा काम नहीं। नाटक तो अदा किया हेमु गढवी ने! नाटक करना हमारा काम है? हमारा नाटक नहीं, नेटवर्क होता हैं! सब प्रपंच कि 'आ जा, फसा जा!'

कानजी भुट्टा बारोट 'जीथराभाभा' में यह बात कहते थे 'तुझे शीशे में उतार दूं! उस पर बूच मार दूं!'

बाप! भगतबापू के खेत में और महानगर में रहता एक नया किसान बाजी मार गया! अब मुझे आगामी सात दिन बोने का काम आसान रहेगा। प्रभुदानबापू ने अच्छे बीज दिए। भूल्यवान चारणी साहित्य, उसके शब्द, ऐसे बीज जगत में कहां है, साहब! अब मुझे सात दिन बोना सरल रहेगा। अब काफ़ी फसल होगी। इस खेत में आकर इन दोनों ने सुंदर खेत के मिट्टी के चक्के तोड़ दिए हैं। और पांच-पांच विभूतिओं की वंदना हुई। इन्होंने ओलरेडी अपने-अपने क्षेत्रों से वर्षा की है। ये सभी महापुरुष बरसे हैं। साहब, ये सब पहले से ही वर्षा करके गए हैं। साहब, अब मुझे बोआई सरल रहेगी। मैं यूं तो बोआई कर जाता, शायद इतनी फसल न आती।

जण को पास न जाय अने उकरडो आघो करे,
एना गुण ते दि' गवाय, जे दि' करहट पाके कागडा।

कूड़े कर्कट का गुण तो उस दिन गाया जाय जब उसमें से कोई गोरखनाथ जगे; कोई जटाधारी जगे। अत: अब बहुत सरल लगेगा। मैं अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। शब्दों को मत मानिए,मेरे मौन से समझ लीजियेगा। प्रसन्न होता हूं। शब्द कम पड़ते हैं। यूं अत्यधिक फूला नहीं समाता। ऐसे कार्य का साक्षी बनने का किसके भाग्य में लिखा होगा? अत: राशि का कोई मूल्य नहीं है क्योंकि आप के पास जो मूल्यवान विद्या है इसके सामने राशि क्या है? मुझे यह भी पता नहीं कि क्या देते हैं? यह भी भूल गया हूं! भूलने जैसा भी है। हमें याद नहीं रहना चाहिए कि हमने क्या दिया? यदि याद रह जाता है तो कितने ही अंकुर फूटते हैं!

हम आप को क्या दे, बाप! बहुत हृदय से कहता हूं, जिसके पास सिद्धि है पर जिसे प्रसिद्धि से मोह नहीं है, ऐसे की आरती उतर रही है संध्या के समय यह काग के खेत में। अपने-अपने क्षेत्र में कितने अच्छे कार्य किए हैं, साहब! उनकी छाया में बैठे तो नींद आ जाय, विश्राम मिल जाय। हेमु गढ़वी का पुण्यश्लोक नाम, उनके परिवार में आया अपना यह बिहारी; ज्यादा प्रिय है ऐसा नहीं कहूंगा; नहीं तो फ़िर आप सब...! सभी प्रिय है। पर बिहारीभाई हर तरह से जलसा कराए; सकल कला गुण धाम! ऐसा आनंद कराए। साहब! चारण का काम समाज को गंभीर करना नहीं है पर उसकी बत्तीसी को खोलना है। यह समाज हंसता रहे, प्रसन्न रहे, उज्ज्वल रहे। शायद चारण जहां से आए हैं न, वहीं निश्चित किया गया यह काम है।

इस काग के खेत में ऐसा सुंदर अवसर मनाया जाये जिसमें आप सब आए, हमें आनंद दे इससे बढ़कर हमारी प्रसन्नता क्या हो सकती है? अपने क्षेत्र में इन पांचों का जो योगदान है, उन सब को प्रणाम करता हूं। ऐसे सुंदर कार्य करते हैं उस समिति को भी आदर देता हूं। बाबुभाई और उनका समग्र परिवार चुपचाप इस कार्य में जुड़े है यह मेरी प्रसन्नता का प्रसंग है। आप सभी आए, आते रहिए, आशीर्वाद दीजिए, शुभकामनाएं दीजिए। बाकी तो भरा हुआ आदमी हूं। कुछ कम नहीं है। इसमें कुछ और लेने जाऊं तो छलक जाने का ड़र लगता है! रामनाम, 'रामचरित मानस', मेरा हनुमान और मेरा गुरु, पर्याप्त है। 'कह कबीर मैं पूरा पाया।'

('काग-अवोर्ड (२०१५) अर्पण समारोह में कागधाम-मजादर (गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्य ता.२२-२-२०१५)

सांध्य-प्रस्तुति

॥ जय सीयाराम ॥